संत श्री आसारामजी आश्रम द्वारा प्रकाशित

ऋषि प्रसाद

हिन्दी

मूल्य : रु. ६/-
अंक : ११७
मई २००१

हिमगिरि से हैं निकली गंगा,
जग को पावन करने ।
बापू आये जग में
सबके त्रिविध ताप को हरने ।।
देह छूटने पर गंगाजी
सबको पार लगायें ।
आत्मज्ञान दे बापू
जीते-जी ही मुक्त बनायें ।।
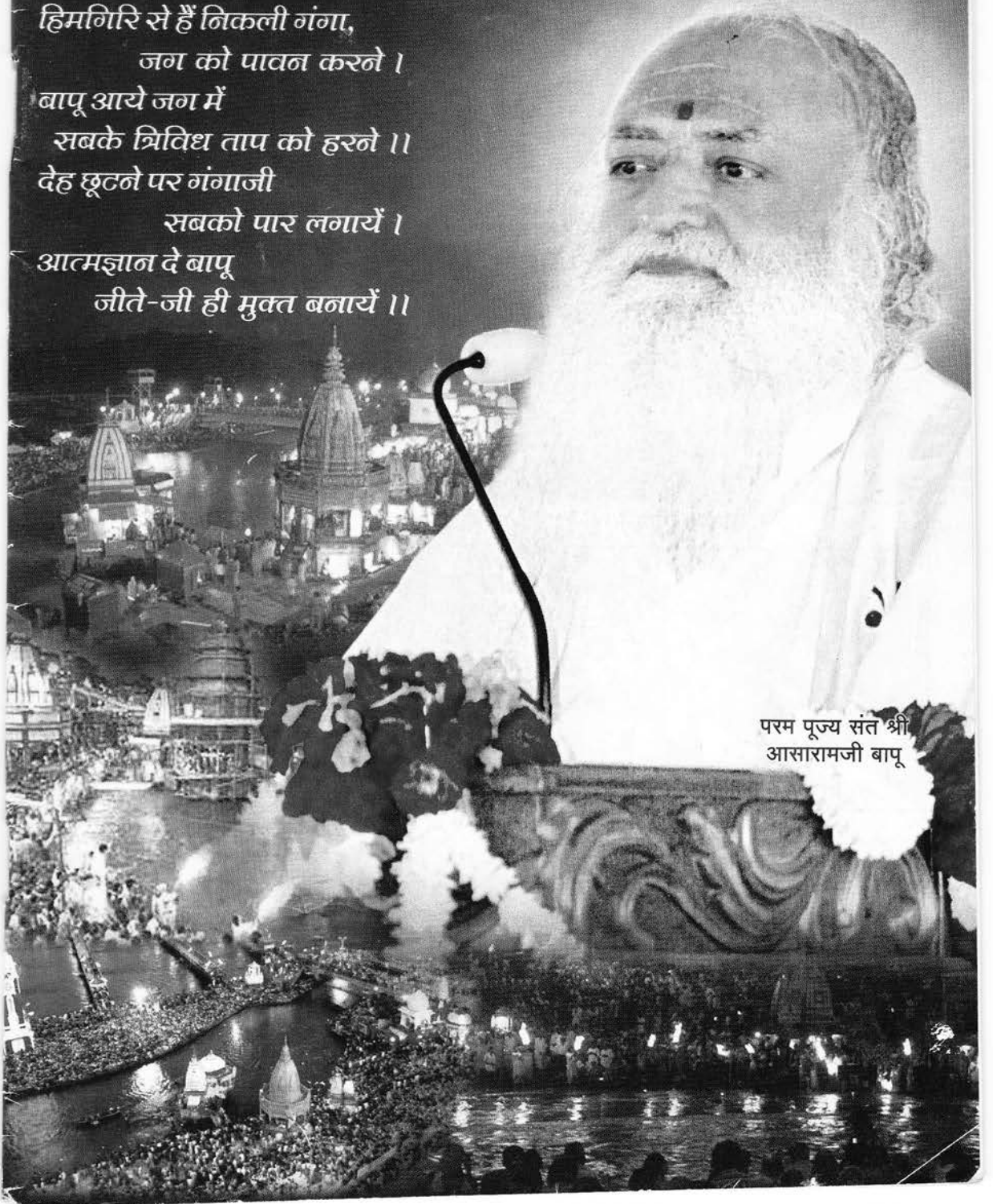
परम पूज्य संत श्री
आसारामजी बापू

'अवतरण दिवस का वंदन है, गुरुदेव कोटि अभिनंदन हैं...'

कीर्तन की मधुर व पावन ध्वनि से वातावरण को गुंजायमान करते, प्रसाद, साहित्य आदि वितरित करते हुए साधकों ने हर्षोल्लास से मनाया पूज्य बापूजी का अवतरण-दिवस ।

धुलिया आश्रम (महा.) सूरत आश्रम (गुज.)

गाँधीनगर (गुज.) बैंगलोर (कर्नाटक)

चिखोद्रा, जि. आणंद (गुज.) जयपुर (राज.)

छिंदवाड़ा (म.प्र.) न्यूजर्सी (अमेरिका)

ऋषि प्रसाद

मासिक पत्रिका

हिन्दी, गुजराती, मराठी, उड़िया, तेलगू, कन्नड़ व अंग्रेजी भाषाओं में प्रकाशित

वर्ष : १९ अंक : १९७
मई २००९ मूल्य : रु. ६-००
वैशाख-ज्येष्ठ वि.सं. २०६६

सदस्यता शुल्क (डाक खर्च सहित)

भारत में

(१) वार्षिक	: रु. ६०/-
(२) द्विवार्षिक	: रु. १००/-
(३) पंचवार्षिक	: रु. २२५/-
(४) आजीवन	: रु. ५००/-

अन्य देशों में

(१) वार्षिक	: US $ 20
(२) द्विवार्षिक	: US $ 40
(३) पंचवार्षिक	: US $ 80

ऋषि प्रसाद (अंग्रेजी)	वार्षिक	द्विवार्षिक	पंचवार्षिक
भारत में	७०	१३५	३२५
अन्य देशों में	US $ 20	US $ 40	US $ 80

कृपया अपना सदस्यता शुल्क या अन्य किसी भी प्रकार की नकद राशि रजिस्टर्ड या साधारण डाक द्वारा न भेजा करें। इस माध्यम से कोई भी राशि गुम होने पर आश्रम की जिम्मेदारी नहीं रहेगी। अपनी राशि मनीऑर्डर या डिमांड ड्राफ्ट (अमदावाद में देय) द्वारा ही भेजने की कृपा करें।

संपर्क पता : 'ऋषि प्रसाद', श्री योग वेदांत सेवा समिति, संत श्री आसारामजी आश्रम, संत श्री आसारामजी बापू आश्रम मार्ग, मोटेरा, अहमदाबाद, पो. साबरमती-३८०००५ (गुजरात)।
ऋषि प्रसाद से संबंधित कार्य के लिए फोन नं. : (०७९) ३९८७७७१४, ६६११५७१४.
अन्य जानकारी हेतु : (०७९) २७५०५०१०-११, ३९८७७७८८, ६६११५५००.
e-mail : ashramindia@ashram.org
web-site : www.ashram.org

स्वामी : संत श्री आसारामजी आश्रम
प्रकाशक और मुद्रक : श्री कौशिकभाई पो. वाणी
प्रकाशन स्थल : श्री योग वेदांत सेवा समिति, संत श्री आसारामजी आश्रम, संत श्री आसारामजी बापू आश्रम मार्ग, मोटेरा, अहमदाबाद, पो. साबरमती-३८०००५. गुजरात
मुद्रण स्थल : विनय प्रिंटिंग प्रेस, ''सुदर्शन'' मिठाखली अंडरब्रीज के पास, नवरंगपुरा, अहमदाबाद- ३८९०००९. (गुजरात)
सम्पादक : श्री कौशिकभाई पो. वाणी
सहसम्पादक : डॉ. प्रे. खो. मकवाणा, श्रीनिवास

अनुक्रमणिका

विभिन्न टीवी चैनलों पर पूज्य बापूजी का सत्संग

संस्कार	IBN7	care WORLD
रोज सुबह ७-५० बजे (सोम से शुक्र)	रोज सुबह ६.१० बजे	रोज सुबह ७-०० बजे

प्रखर विवेक

(पूज्य बापूजी के सत्संग-प्रवचन से)

गंगा-किनारे एक गाँव था सोमपुरिया । वहाँ एक निःसंतान ब्राह्मण दम्पति रहता था । पति-पत्नी दोनों हरिभक्त थे, सत्संग में उनका विश्वास था । साधु-संन्यासी को देखते तो आदर से उनको प्रणाम करते, दो वचन सुनते । न पत्नी के हृदय में पुत्रप्राप्ति की वासना थी न पति के हृदय में । इस प्रकार वे जीवन-यापन कर रहे थे ।

एक ऐसा दिन आया कि पति को हैजा हो गया । हकीम-डॉक्टरों की जो कुछ सलाह लेनी चाहिए सब किया पत्नी ने, लेकिन उनका शरीर अब चल बसेगा- अब चल बसेगा ऐसा हो गया । ब्राह्मणी समझदार थी, बुद्धिमान थी । उसने सोचा, 'अब खाट पर पड़े-पड़े चल बसें यह ठीक नहीं, इनके लिए तो कुछ करना चाहिए ।' वह चिंतित रहने लगी । इतने में गंगा-किनारे यात्रा करते-करते कोई दण्डी संन्यासी गुजरे । ब्राह्मणी ने अपने पति को संन्यास की दीक्षा देने के लिए बाबाजी से प्रार्थना की ।

दण्डी संन्यासी ने कहा : ''ये तो बीमार पड़े हैं ।''

ब्राह्मणी बोली : ''महाराज ! क्या पता कब चल दें, इसलिए इनको संन्यास की दीक्षा दे दो । दीक्षा से कम-से-कम एक ब्रह्महत्या का पाप तो दूर हो जायेगा, सद्गति तो हो जायेगी । साक्षात्कार नहीं होगा पर थोड़ी ऊँचाई तो आ जायेगी ।''

संन्यासी ने देखा कि वास्तव में अब ये उठें-न-उठें कोई पता नहीं । पति तो बेहोश थे लेकिन दण्डी संन्यासी ने उनको संन्यास की दीक्षा दे दी, विधि कर दी । संन्यासी तो चलते भये । पत्नी ने बड़े आदर से पति की सेवा की । दैवयोग से उनकी तबीयत धीरे-धीरे सुधरने लगी और वे उठ खड़े हुए । पत्नी छाया की नाईं हाजिर रहकर सेवा करती थी लेकिन पहले जो स्पर्श करके उठाती थी, उन्हें स्पर्श कर लेती थी, अब वह न करके दूर-दूर से सब सेवा करती थी ।

ब्राह्मण ने पूछा : ''हे प्रिये ! अब तू मुझे स्पर्श किये बिना ही सब सेवा करती है, क्या बात है ?''

उसने कहा : ''स्वामीजी !...''

आज तक तो बोलती थी : 'पतिदेव !'

''स्वामीजी ! आपकी तबीयत जब लड़खड़ा गयी थी तो मैंने सोचा आपकी सद्गति हो जाय, इसलिए एक दण्डी संन्यासी को प्रार्थना करके मैंने आपको संन्यास दिला दिया है ।''

पति भी कम नहीं थे । सत्संग के संस्कार थे, कुछ पुण्याई थी, विवेक जग गया ।

''अच्छा... ! तो मुझे दण्डी संन्यासी से संन्यास दिला दिया है । अच्छा किया । फिर तो संन्यासी को घर में रहना... काष्ठ की पुतली को भी नहीं छूना चाहिए तो मैं तेरी छुआन से तो बचूँ । तूने मेरे को बचाया, धन्यवाद माता !''

पति मन-ही-मन पत्नी के पैर छूकर चले गये । गंगा के किनारे-किनारे चलते-चलते जब भूख लगे जरा-सा टुकड़ा माँग लेते, गंगाजी में उसे धो डालते और खा लेते । 'ॐ' का जप करते । 'गंगे हर' करते-करते ग्यारह दिन बाद हरि के द्वार हरिद्वार पहुँचे । उस समय इतना भीड़-भड़ाका नहीं था । उससे फिर आगे निकले और किसी संन्यासी महापुरुष की खोज करके काषाय वस्त्र धारण कर लिये, विधिवत् संन्यास ले लिया, फिर वेद-वेदांत पढ़ने लगे । घर में पवित्रता से जीये थे, थोड़ा-बहुत विवेक था । वेद-वेदांत का ज्ञान सुनकर उसका मनन करते थे । अच्छे

महापुरुष, संन्यासी, आचार्य हो गये। दूसरे संन्यासी उनके पास प्रवचन सुनने आते थे। सावन का महीना हो तो ब्रह्मसूत्र का चिंतन-मनन, प्रवचन चालू कर देते। चतुर्मास में 'विचारसागर', 'पंचीकरण' आदि वेदांत के ग्रंथ चालू करते थे।

हरिद्वार में कुंभ का मेला लगा। वह ब्राह्मणी अपनी पड़ोसन बहनों के साथ, अपनी सखियों के साथ कुंभ के मेले में गयी। उसने उन संन्यासी की प्रशंसा सुनी। लोगों ने बताया कि वही तुम्हारे पतिदेव बड़े महान आचार्य, संत बन गये हैं। वह बोली : ''पतिदेव काहे के ? वे तो संन्यासी देव हैं।''

तो जैसे और माइयाँ दर्शन करने गयीं, वैसे ही यह भूतपूर्व पत्नी भी गयी। सत्संग की चर्चा चल रही थी। ज्यों ही माइयों के झुंड ने प्रवेश किया त्यों स्वामीजी की नजर पत्नी पर पड़ी। पत्नी को बोले : ''अरे, तू कैसे यहाँ आ गयी !''

माई ने कहा : ''स्वामीजी ! अभी तक आप मुझे भूल नहीं पाये !''

स्वामीजी ने सिर नीचे कर दिया। नीचे कर दिया तो कर दिया फिर कभी आँख उठाकर किसीको देखा नहीं। हाथ जो यूँ थे बँधे हुए, बँधे हुए ही रहे। कोई आकर खिला देता, कोई नहला देता। तीस वर्ष ऐसे बिताये।

एक दिन कहीं घूमने जा रहे थे। कुछ मुसलमानों ने उनके शरीर पर घाव कर दिये। डण्डा-वण्डा उनके किसी अंग में डाल दिया। जब अमलदारों को पता चला कि ऐसे पवित्र संत पर यह जुल्म, तो उन्होंने विधर्मियों की बस्ती को जलाने का आदेश दिया। तब उनके वे दो हाथ खुले और इशारे से मना कर दिया। ऐसे-ऐसे दृढ़निश्चयी लोग होते हैं !

अपनी पत्नी में तुलसीदासजी का इतना मोह था कि नदी को मुर्दे के सहारे पार कर गये। अजगर टँगा था उसको पकड़कर खिड़की कूदकर पत्नी के कमरे में गये। पत्नी चौंकी, बोली : ''इतनी रात में !''

''प्रिये ! तेरे लिए। तूने रस्सी जो टाँग रखी थी।''

''मैं क्यों कोई रस्सी टाँगके रखती आपके लिए ?''

दीया जलाया, प्रकाश किया।

''ओहोहो... ! अजगर टँगा है। उसका सहारा लेकर आप कूदके आये कामांध होकर ! मेरे इस हाड़-मांस के शरीर में इतना मोह हो गया कि मौत का भी आपको पता नहीं कि मौत खड़ी है। इससे आधा प्रेम अगर भगवान में होता तो आप तो अपना उद्धार कर लेते और दूसरों के उद्धार करनेवाले हो जाते।

हाड़ मांस की देह मम, ता में इतनी प्रीति।
या ते आधी जो राम प्रति,
तो अवसि मिटे भवभीति ।।''

चल पड़े तो चल पड़े, संत तुलसीदास हो गये। जिस क्षण हम अपने विवेक का आदर करें, जिस क्षण अपने विवेक का दीया जगे, उसके बाद फिर वह बुझे नहीं इसकी सावधानी रखें !

विवेक तो है लेकिन आदर नहीं करते न ! विवेक तो कहता है कि यह बुरा है लेकिन हम विवेक का आदर नहीं करते। ईश्वर का रास्ता अच्छा है, संयम का रास्ता अच्छा है - यह विवेक से हम जानते हैं, लेकिन उसका आदर नहीं करते इसलिए हम फिसल जाते हैं। धन, सत्ता, वाहवाही, लोभ, मोह, काम, क्रोध, मेरा-तेरा... दुनिया भर की गंदगी में हम लोग फिसल जाते हैं। केवल विवेक हो जाय कि 'यह मिल गया, फिर क्या ? इतना खा लिया, फिर क्या ? यहाँ घूमेंगे, यह करेंगे... आखिर कब तक ?'

सत्संग में हमारे विवेक का दीया जलता है लेकिन हम सुरक्षा नहीं कर पाते इसलिए फिर बुझ जाता है और अंधकार में आ जाते हैं। जब अंधकार में आते हैं, ठोकर खाते हैं तब तक बहुत समय गुजर जाता है। कोई सहयोग दे देता है, बचा लेता है तो जरा तसल्ली **(शेष पृष्ठ २७ पर)**

अब तुम भी थोड़ा पुरुषार्थ करो

(पूज्य बापूजी के सत्संग-प्रवचन से)

कई लोग फरियाद करते हैं कि ध्यान नहीं लगता। क्यों नहीं लगता ? क्योंकि हम संसार में रहकर, संसार के होकर भगवान का ध्यान करना चाहते हैं। हकीकत में हम भगवान के होकर और भगवान में ही बैठकर भगवान का ध्यान करें तो भगवान का ध्यान टूट नहीं सकता है। सुबह साधन-भजन करते समय लम्बे-लम्बे चार-पाँच श्वास ले लो। श्वास लो तो ईश्वर की कृपा भरो और श्वास छोड़ो तो ऐसी भावना करो कि 'हमने चंचलता छोड़ दी है। अब जो कुछ हमारे मन में आयेगा वह प्रभु का ही होगा। ईश्वर के सिवाय और कुछ हमारे मन में अब नहीं आ सकता। हम अब भगवान की सेवा कर रहे हैं, इस समय भगवान के सिवाय हमारे मन में और कोई बात नहीं आयेगी।

हम विचार हटाने में लगते हैं तब भी ध्यान नहीं लगता और उस विचार में खो जाते हैं तब भी नहीं लगता लेकिन उस समय जो भी विचार आये उसे महत्त्व न दो तो उन विचारों का महत्त्व घट जायेगा।

इस तरह महापुरुषों ने चित्त को उस परमात्म-प्रसाद की प्राप्ति कराने के लिए न जाने क्या-क्या नुस्खे आजमाये लेकिन जिनको लगन लगी है वे ही करते हैं। करोड़ों मनुष्य तुच्छ चीजों में संतुष्ट हो जाते हैं, कोई-कोई भगवान के रास्ते चलते हैं तो थोड़ा-बहुत चलके तुष्टि आ जाती है। थोड़ी वाहवाही होने लगती है, थोड़ा यश मिलने लगता है या थोड़ी वस्तुएँ मिलने लगती हैं तो उसमें रुक जाते हैं। जब उससे आगे बढ़ते हैं तो अपयश, विरोध होने लगता है तो उससे भागके भगवान का रास्ता छोड़ देते हैं। उससे कोई आगे निकलता है तो ऋद्धि-सिद्धि आने लगती है, उसमें फँस जाते हैं। उससे भी कोई आगे निकलता है तब चित्त के पूर्ण प्रसाद परमात्मा का साक्षात्कार होता है।

संत कबीरजी कहते हैं :

चलो चलो सब कोई कहै, पहुँचै विरला कोय।
एक कनक अरु कामिनी, दुर्गम घाटी दोय ॥
माया तजना सहज है, सहज नारी का नेह।
मान बड़ाई ईर्ष्या, दुर्लभ तजना ऐह ॥

घर-बार छोड़ दिया, हो गये फक्कड़, हो गये त्यागी बाबा लेकिन अंदर में त्यागीपने का भी भाव न रहे यह सावधानी रखनी चाहिए। माया भी छूट जाय... पत्नी छूट जाय, ब्रह्मचारी भी हो जाय फिर भी गहराई में मान-बड़ाई और ईर्ष्या रहती हैं।

श्री रामकृष्ण परमहंस कहते थे कि 'साधक के लिए, साधु के लिए लोकैषणा - यह आखिरी विघ्न है।'

सब हमारे लिए अच्छा-अच्छा बोलें, सब हमारी प्रशंसा करें, हमारी निंदा न हो, हम दुनिया में अपना कुछ नाम करके जायें - यह बहुत सूक्ष्म विघ्न होता है। इसलिए भगवान को कहो कि 'प्रभु ! मेरा मुझमें कुछ नहीं।' अपने 'मैं' को हटा दो और ईश्वर को साक्षी रखो तो फिर ईश्वर की मदद मिलेगी।

हमारा चालबाज मन हमें युगों से धोखा दे रहा है, हम अकेले पुरुषार्थ करेंगे तो थक जायेंगे। इसलिए बार-बार ईश्वर की सहायता लो, बार-

बार अंतर्यामी परमात्मा को प्रार्थना करो । इस तरह आप लग पड़ो तो पुरुषार्थ करना छोड़ना नहीं क्योंकि लाखों वर्षों का, लाखों जन्मों का अभ्यास है फिसलने का, तो एक जन्म में दो-पाँच बार फिसल भी जाओ तो चिंता नहीं करना ।

फिसलना या गिरना कोई पाप नहीं है । यह असावधानी तो है लेकिन फिसलके फिर न चलना यह प्रमाद है, यह पाप है । कभी-कभी साधकों के जीवन में लिया हुआ नियम पूरा नहीं होता इसलिए वे दुःखी हो जाते हैं और अपनेको अयोग्य मानने लगते हैं । कभी-कभी न चाहते हुए काम-क्रोध के आवेग में बह जाते हैं तो अपनेको कामी, क्रोधी, लाचार तथा अनधिकारी मानकर उत्साहहीन हो जाते हैं । लेकिन उन साधकों को ध्यान रखना चाहिए कि अपने अंदर जो गलतियाँ दिख रही हैं- काम की, क्रोध की, लोभ की, चिंता की, आलस्य की, उन गलतियों को देखकर हम निराश नहीं हों क्योंकि यह तो खुशखबरी है कि अपनी गलती तो दिखती है न ! गलती करना तो भूल है पर अपनी गलती न देखना और बड़ी भूल है । कोई गलती दिखाये और उसे न मानना यह तो भूल की पराकाष्ठा है ।

जो पापी हैं, अपराधी हैं उनको अपना अपराध जल्दी-से नहीं दिखता है । वे बोलेंगे : 'सिनेमा देखा तो क्या हो गया यार ! जेब काटी तो क्या है इसमें ? अपन धंधा करते हैं, कोई भीख तो नहीं माँगते !' तो जो गलती से भरे हुए हैं उनको ये दुष्कृत्य गलती नहीं दिखेंगे । साधक को, भक्त को, शुद्ध हृदयवाले को अपनी गलतियाँ दिखती हैं । आँख में काजल लगाते हैं तो वह आँख को नहीं दिखता है, आँख से दूर होता है तब दिखता है, ऐसे ही गलती अगर आपके साथ मिली हुई होती तो आपको नहीं दिखती । अब गलतियाँ दिखती हैं तो साधक एक गलती और कर लेता है कि अपनेको अयोग्य मान लेता है । यह बड़ी गलती है । अपनेको अयोग्य मानने से अपनी योग्यता क्षीण हो जाती है । गलतियाँ दिखें तो भगवान को धन्यवाद दो कि 'प्रभु ! तुम्हारी कृपा से गलतियाँ दिख रही हैं । ये मेरे में नहीं हैं, मन में हैं । मन में हैं इसलिए दिख रही हैं । मेरा मन शुद्ध हो रहा है । तेरी कृपा है । वाह ! प्रभु वाह !' प्रभु को वाह-वाह करो तो तुम्हारा मन शुद्ध होने लगेगा । इसका मतलब यह नहीं कि गलतियाँ करते जाओ । नहीं, हताशा और निराशा के विचार नहीं आने देना और 'अपना अधिकार नहीं है, अपन गृहस्थी हैं, अपना दम नहीं है भाई भगवान के रास्ते चलने का ।...'- ऐसा सोचकर रास्ता छोड़ नहीं देना ।

मनुष्यमात्र को मुक्त होने का अधिकार है । अरे, प्रधानमंत्री खुश हो जाय, एकदम बरस पड़े तो भी अपने चपरासी को जिलाधीश नहीं बना सकता क्योंकि जिलाधीश बनने के लिए उसमें आई.ए.एस. अफसर होने की योग्यता चाहिए । प्रधानमंत्री भी ऐसी गलती नहीं करता तो भगवान कैसे करेंगे ? मनुष्य-जन्म मोक्ष के अधिकारी को ही मिलता है - **साधन धाम मोच्छ कर द्वारा ।** फिर अगर भगवान ने मनुष्य-जन्म दिया है तो हमें निराशा के विचार नहीं करने चाहिए ।

यह तन कर फल बिषय न भाई ।

इस शरीर का फल यह नहीं है कि विषय-विलास करके, हा हा... हू हू... करके, दुःखी-सुखी होके जिंदगी बर्बाद कर लें । नहीं, इस देहप्राप्ति का फल विषय-भोग नहीं है, यह मनुष्य-जन्म मुक्ति के लिए ही है । तो भगवान ने तो हमको मुक्ति का अधिकारी बना दिया, अब आप भी तो थोड़ा पुरुषार्थ करो भैया ! पुरुषार्थ भी यही करना है कि बस, बार-बार ईश्वर की सहाय लो, उसे प्रार्थना करो, अपने आत्म-ईश्वर के

विषय में सुनो, ईश्वर का ज्ञान पा लो । 'श्री विष्णुसहस्रनाम' और 'श्री नारायण स्तुति'* में भगवान के स्वभाव का वर्णन है । भगवान के स्वभाव को जिसने जाना, वह भगवान का भजन किये बिना रह नहीं सकता ।

भगवान शिवजी कहते हैं :

उमा राम सुभाउ जेहिं जाना ।
ताहि भजनु तजि भाव न आना ।।

(श्रीरामचरित. सुं.कां. : ३३.२)

'श्री नारायण स्तुति' पढ़ो और नारायण के ज्ञान, माधुर्य में प्रवेश करो । इससे मन-बुद्धि भी विलक्षण-अद्भुत लक्षणों से सम्पन्न हो जायेंगे । ❑

** आश्रम से प्रकाशित एक पुस्तक जो 'श्रीमद्भागवत' में आयी भगवान नारायण की स्तुतियों का संकलन है ।*

कभी ऐसा नहीं सोचना कि 'इस देवता को फूल चढ़ाकर राजी रखूँगा, उसको राजी रखूँगा... ।' देवता चापलूसी से वश नहीं होते और भगवान ने मस्का मारने के लिए तुमको पैदा नहीं किया है । हम लोग मंदिर में जाते हैं और भगवान को मस्का मारते हैं इसीलिए बरकत नहीं आती, सीधी बात है । भगवान को मस्का मारते हैं : **त्वमेव माता च पिता त्वमेव...** फिर इधर देखेंगे... **त्वमेव बंधुश्च सखा त्वमेव । त्वमेव विद्या द्रविणं त्वमेव...** फिर जूते की तरफ देखेंगे कि कोई ले तो नहीं गया । **त्वमेव सर्वं मम देव देव ।।** ऐसे भक्ति नहीं होती भाई !

'माता का जो चैतन्य है, प्रभु ! वह तुम हो' - यह समझना होता है । समझते नहीं, बस बोलते हैं तो सिर्फ मस्काबाजी है न वह ! 'माता का जो चैतन्य है, पिता का जो चैतन्य है, बंधु और सखा का जो चैतन्य है और देवाधिदेव है, सब तुम-ही-तुम हो' - ऐसा समझकर भगवान में शांत होना चाहिए । **- पूज्य बापूजी**

ऐसा साधक जल्दी सफल हो जाता है

- पूज्य बापूजी

तुम ईश्वर के रास्ते चलते हो और अनुकूलता आने लग जाय तो यह तो थोड़ी-बहुत सफलता हुई लेकिन अगर प्रतिकूलता आती है तो समझो कि ईश्वर के रास्ते तुम्हारी यात्रा तेजी से होनेवाली है ।

जिसको वो इश्क करता है,
उसीको आजमाता है ।
खजाने रहमत के, इसी बहाने लुटाता है ।।

जिस साधक, भक्त को सतानेवाला, तंग करनेवाला कोई कुटुम्बी मिल जाता है, समझो उसका बड़ा भाग्य है । मीरा को सतानेवाले, तंग करनेवाले नहीं मिलते तो शायद मीरा की इतनी दृढ़ता न होती । प्रह्लाद को सतानेवाला, तंग करनेवाला हिरण्यकशिपु न होता तो शायद प्रह्लाद की इतनी दृढ़ भक्ति न भी होती । एकनाथजी को सतानेवाले लोग न मिलते तो शायद एकनाथजी को भी इतना धैर्य और इतनी प्रशांति में स्थिति न भी होती । अगर विघ्न-बाधा आती है तो समझ लो कि भगवान हमें अपने प्रशांत स्वभाव में तेजी से लाना चाहते हैं और सुख-सुविधा आ जाती है तो समझ लो भगवान हमारी कमजोरी समझते हैं कि हम सुख के भगत हैं, इसलिए खिलौने दे दिये । इन खिलौनों का उपयोग करना । ये खिलौने हैं, इनमें जीवन नहीं गँवाना है । उन सुखद अवस्थाओं को भगवान का प्रसाद समझकर जैसे भगवान के आगे थाली धरते हैं, भोग लगाते हैं तो फिर वह अकेले नहीं खाया जाता बाँटके खाया जाता है, ऐसे ही योग्यता और सहूलियतें आ जायें तो भगवत्कार्य में उनका सदुपयोग करे और विघ्न-बाधा आ जाय तो छलाँग मारके अपनेको प्रशांति में पहुँचा दे तो वह साधक जल्दी सफल हो जाता है ।

ज्ञानमयी दृष्टि

(पूज्य बापूजी के सत्संग-प्रवचन से)

जगत कैसा है ? पहले देखो, आपके मन का भाव कैसा है ? जैसा आपका भाव होता है, जगत वैसा ही भासित होता है । सुर (देवत्व का) भाव होता है तो आप सज्जनता का, सद्गुण का नजरिया ले लेते हैं और आसुरी भाव होता है तो आप दोषारोपण का नजरिया ले लेते हैं । जिस एंगल से फोटो लो वैसा दिखता है । जगत में न सुख है न दुःख है, न अपना है न पराया है । आप राग से लेते हैं, द्वेष से लेते हैं कि तटस्थता से लेते हैं । आप जैसा लेते हैं ऐसा ही जगत दिखने लगता है ।

कोई भी जगत का व्यवहार किया जाता है तो उसे सच्चा समझकर चित्त को उससे विह्वल न करो, नहीं तो आसुरी वृत्ति हो जायेगी, शोक हो जायेगा, दुःख हो जायेगा । अच्छा होता है तो उसका अहंकार न करो । हो-होके बदलनेवाला जगत है, यह द्वैतमात्र है - या तो सुख या तो दुःख । इन दोनों के बीच का तीसरा नेत्र खोलो ज्ञान का । आध्यात्मिकता की पराकाष्ठा है ज्ञानमयी दृष्टि करना - सुख में भी न उलझना, दुःख में भी न उलझना ।

न खुशी अच्छी है, न मलाल अच्छा है ।
यार तू अपने-आपको दिखा दे,
बस वो हाल अच्छा है ।।

प्रभु ! तू अपनी चेतनता, अपनी सत्यता, अपनी मधुरता दे ।

दायाँ-बायाँ पैर पगडण्डी पर, सीढ़ियों पर रखते-रखते देव के मंदिर में पहुँचते हैं, ऐसे ही सुख-दुःख, लाभ-हानि, जीवन-मृत्यु इनको पैरों तले कुचलते-कुचलते जीवनदाता के स्वरूप का ज्ञान पाना चाहिए, उसीमें विश्रांति पानी चाहिए, उसीमें प्रीति होनी चाहिए ।

जो कल नहीं आये थे वे हाथ ऊपर करो ।

(कुछ लोग हाथ ऊपर करते हैं ।)

ठीक है ।

जो आज नहीं आये हैं वे हाथ ऊपर करो ।

देखो, कोई नहीं करता ।

यह किसके द्वारा आता है ? ज्ञान के द्वारा । तो इस ज्ञान का स्रोत क्या है ?

इन्द्रियों का ज्ञान । इन्द्रियों की गहराई में मन का ज्ञान । मन की गहराई में बुद्धि का ज्ञान । लेकिन इन्द्रियाँ, मन और बुद्धि में ज्ञान कहाँ से आता है ? 'मैं' से । 'मैं' माना वही चैतन्य, जहाँ से 'मैं' स्फुरित होता है । सबको 'मैं' चाहिए । जहाँ से 'मैं' उठता है उस चैतन्य का सुख चाहिए । है न !

कोई बोलता है : ''मैं हूँ, तुम नहीं हो ।'' तो क्या आप मानोगे ?

आप बोलोगे : ''मैं भी हूँ । मैं कैसे नहीं हूँ ? मैं हूँ तभी तुम हो । मैं हूँ तभी तुम दिखते हो ।''

'मैं' ही मेरे में तृप्त है । 'मैं, मैं, मैं, मैं...' ये आकृतियाँ अनेक हैं, अंतःकरण अनेक हैं लेकिन 'मैं' की सत्ता एक है । उसी 'मैं' में आराम पाओ । गहरी नींद में आप अपने 'मैं' में ही तो जाते हो, और क्या है ?

उस मूल ज्ञान को 'मैं' के रूप में जान लिया तो आपका तो काम हो गया, देवत्व प्रकट हो गया लेकिन आपकी वाणी सुननेवाले को भी महापुण्य होगा ।

एक घड़ी आधी घड़ी, आधी में पुनि आध ।
तुलसी संगत साध की, हरे कोटि अपराध ।।
सुख देवें दुःख को हरें, करें पाप का अंत ।
कह कबीर वे कब मिलें, परम सनेही संत ।। ❑

वर्तमान में टिको

– पूज्य बापूजी

जिसका आनंद, जिसका सुख बाहर है; कुछ खाकर, कुछ देखकर, कुछ भोगकर सुखी होने की जिसके जीवन में गलती घुसी है वह भले ही दर-बदर, लोक-लोकांतर में, कभी स्वर्ग में तो कभी बिहिश्त में, कभी पाताल में तो कभी रसातल में तो कभी तलातल में, कभी इन्द्रियों के दिखावटी सुख में तो कभी मन के हवाई किलों में उलझके थक जाता है और पाता है कि 'मैं नहीं चल सकता । मेरा काम नहीं ईश्वर की तरफ चलना ।' अरे ! मनुष्य-जन्म मिला है, ईश्वरीय शांति, आत्मज्ञान, आत्मसुख पाना तुम्हारा जन्मसिद्ध अधिकार है । ईश्वरीय सुख की तरफ चलने के लिए ही तुम्हारा जन्म हुआ है । ईश्वर का, आत्मा का शाश्वत सुख पाने के लिए ही तुम्हारे पास बुद्धि और श्रद्धा है । नहीं कैसे चल सकते हो ? असंभव नहीं है । यही काम तुम कर सकते हो । दूसरे काम में तो तुम सदा के लिए सफल हो भी नहीं सकते । संसार में हर क्षेत्र में सदा सफल होना कठिन है लेकिन यह जो आत्मदेव है इसीमें सदा सफलता है ।

भजन करते हो भगवान का और माँगते हो संसार तो तुमने भगवान से लेना कतई नहीं सीखा । तुम अगर आत्मा में विश्रांति पाये हुए हो तो तुम्हारी बुद्धि तेजस्वी होने से इन छोटी-छोटी बातों का तो अपने-आप हल निकलेगा । तुम वर्तमान में टिकते जाओ तो ये छोटी-छोटी मुसीबतें तो अपने-आप सिमटती जायेंगी, विदा होती जायेंगी ।

'पति कहने में चले, पत्नी कहने में चले, बेटा कहने में चले, शरीर में रोग न हों, भोग मिलते रहें, अभी इतना है, यहाँ हूँ और फिर इतना पाऊँगा तथा वहाँ पहुँचूँगा तब सुख होगा...' – यह जो कल्पना है, यह तुम्हारे वर्तमान के खजाने को लूट लेती है और तुम्हें कंगाल बना देती है । जो जहाँ है वहीं अपने सुखस्वरूप का ज्ञान पाकर उसमें विश्रांति पा ले तो बेड़ा पार हो जाय । बाहर के सुख की इच्छा छोड़कर सुखस्वरूप में टिक जाय तो **'नष्टो मोहः स्मृतिर्लब्धा'** हो जाय । घर में जो वस्त्र स्वाभाविक मिलें उन्हें पहन लो, जो सादा-सूदा भोजन बने उसे खा लो, जहाँ नींद आये सो लो, ऊँचे महलों की कल्पना न करो और सुहावने बिस्तर सजाने की जरूरत मत बनाओ । जरूरत बनानी है तो यह बनाओ कि भूत और भविष्य की चिंतनधारा को तोड़कर निश्चिंत नारायण में आराम पाना है ।

भूत या भविष्य का एक विचार उठा और दूसरा विचार अभी उठा नहीं है, यह दो विचारों के बीच की जो अवस्था है वह परमात्म-अवस्था है, वह चैतन्य-अवस्था है । उसमें जो सदा जगे हैं वे भगवान हैं, जो जगने का प्रयत्न करते हैं वे साधक हैं और जिनको उसका पता ही नहीं है वे सरकती हुई चीजों में उलझनेवाले संसारी हैं । फिर चाहे वह चीज इस पृथ्वी की हो, चाहे लोकांतर की हो लेकिन है सब संसार ।

ध्यान-भजन में बैठते हो तब 'यह मिलेगा, यह होगा, यह किया है, यह करूँगा...' ऐसे विचार उठें तो 'अगड़म-तगड़म स्वाहा...' ऐसा किया करो, तुम ठहर जाओगे । वर्तमान में जरा-सा आओगे लेकिन टिकोगे नहीं क्योंकि पुरानी आदत है । ईश्वरस्वरूप 'ॐ' का दीर्घ उच्चारण करोगे तो इधर-उधर से हटकर पुनः वर्तमान में आ जाओगे । इसका तुम बारीकी से थोड़ा-सा विचार करो, अनुसंधान करो तो तुम्हारे दो विचारों के बीच का जो अंतराल है वह थोड़ा बढ़ जायेगा । एक संकल्प उठा, दूसरा उठने को है- यह दो विचारों के बीच की जगह बढ़ जायेगी । वह बढ़ जाना ही परमात्मा में स्थित होना है और वह अगर तीन मिनट रह जाय, केवल तीन मिनट तो निर्विकल्प समाधि हो जायेगी, साक्षात्कार हो जायेगा । **उसमें जितना ज्यादा टिके उतना सामर्थ्य बढ़ जायेगा ।** ❑

मन को वश करने के उपाय

(गतांक का शेष)

(पूज्य बापूजी के सत्संग-प्रवचन से)

(५) भगवद्रस में प्रीति रखें : संसार में राग और प्रियता है न, वही मन को दुष्ट बना देती है । जिसमें भी राग और प्रियता है वह तुम्हें दुःख देगा और रुलायेगा । जिसके प्रति भी राग करोगे वह छूटेगा, नाराज हो जायेगा, मिट जायेगा, चला जायेगा, इसलिए राग और प्रियता से बचो । **वैराग्यरागरसिको भव भक्तिनिष्ठ...** वैराग्य में राग रखो और भगवद्रस में प्रीति रखो । इससे आपको मन की चंचलता मिटाने में और सच्चा सुख पाने में सफलता मिलेगी ।

(६) जहाँ-जहाँ मन जाय वहाँ-वहाँ से हटाकर परमात्मा में लगाना : जहाँ-जहाँ मन जाय उसे घुमा-फिराकर छल-छिद्र, कपट से रहित, गुण-दोष के आकर्षण से रहित अपने भगवत्स्वभाव में विश्रांति दिलायें, विवेक जगायें । 'मैं कौन हूँ' ऐसा अपनेको पूछकर शांत होते जायें ।

(७) मन के कहने में नहीं चलना : जितना-जितना व्यर्थ की इच्छाओं, व्यर्थ के कर्मों से बचोगे उतनी ही सार्थक इच्छाएँ सहज में ही पूरी होने लगेंगी, सार्थक कर्म सहज में पूरे होने लगेंगे । सही कर्म और सही इच्छा में भी आसक्ति नहीं करोगे तो आपके जीवन में बुद्धियोग आने लगेगा । भगवान के प्रति प्रीति करोगे तो बुद्धियोग होने लगेगा । बुद्धियोग हुआ तो बस, फिर तो महाराज ! आपको स्वर्ग का सुख भी फीका लगेगा ।

(८) मन से अलग होकर उसके कार्यों को देखना : प्रणव (ॐकार) का दीर्घ जप करते-करते शांत होते जायें, इससे भी मन शांत हो जाता है । 'मैं यह शरीर नहीं हूँ, मन नहीं हूँ, बुद्धि नहीं हूँ, चित्त नहीं हूँ, अहंकार नहीं हूँ; इन सबसे परे जो परम तत्त्व है वह मैं कौन हूँ ?' ऐसा विचार करने से भी मन शांत और निर्दोष होने लगेगा । दुःखी-सुखी होता है मन, उसे जो देखता है, जो जानता है वह मैं कौन हूँ ? भगवान को पाने की इच्छा तो है लेकिन कौन पायेगा भगवान को ? बोले : मैं । तो 'मैं कौन हूँ ?' - ऐसा खोजोगे तो भी मन शांत होकर भगवान में विश्रांति पायेगा ।

(९) मन के प्रत्येक कार्य पर विचार करते हुए उसे बुरे चिंतन से बचाना : विचार से भी मन की चंचलता मिटती है कि 'क्या मिलेगा, क्या ले जायेंगे ? आखिर कब तक ? ऐसा हो गया, वैसा हो गया... फिर क्या ?'

'सुख-दुःख आये तो उसको जाननेवाला मैं सम हूँ' - ऐसी स्मृति रखने से भी मन शांत रहेगा ।

(१०) मन को सदा सत्कार्य में लगाये रखें : सेवा से मन को शांति मिलती है और परोपकार का सुख मिलने से मन की वासनाएँ और चंचलता मिटने लगती है ।

(११) ध्यान व त्राटक करना : आँखों को पटपटाया फिर एकटक देखा, दायें-बायें देखना बंद कर दें, मन स्थिर होने लगेगा । भगवान या गुरु की तस्वीर को, मूर्ति को देखते हुए ॐकार का जप करने से मन स्थिर होने लगेगा, वासना का क्षय होने लगेगा ।

(१२) परमार्थ के ग्रंथों का अध्ययन : भगवद्गीता, योगवासिष्ठ महारामायण, उपनिषद्, आत्मज्ञानी महापुरुषों के जीवन-चरित्र आदि को पढ़ते-पढ़ते शांत होने से भी मन में दिव्य भाव आते हैं । **(शेष पृष्ठ १६ पर)**

अहंकार का बैल

(संत कबीरजी जयंती : ७ जून)

काशी में सर्वानंद नामक एक प्रकांड विद्वान अनेक पंडितों एवं विद्वानों को शास्त्रार्थ में हरा चुका था । इससे वहाँ के विद्वानों ने उसे 'सर्वजित' उपाधि प्रदान की और इसी नाम से पुकारने लगे । उसकी माता अपनी काशी-यात्रा में एक बार कबीरजी के सत्संग में आयी और उनसे मंत्रदीक्षा ले गयी । पुत्र के पांडित्य की व्यर्थता को समझते हुए उसने एक दिन सर्वजित से कहा कि वह उसे तभी सर्वजित मानेगी जब वह कबीरजी को शास्त्रार्थ में पराजित कर देगा ।

माता के वचन सर्वजित को चुभ गये । एक बैल पर अपने शास्त्रों को लादकर वह काशी आया और कबीरजी के घर के सामने पहुँचकर पुकारा : ''क्या कबीर का घर यही है ?''

कबीरजी कहीं बाहर गये हुए थे । उनकी पुत्री कमाली पुस्तकों से लदे बैल को देखके समझ गयी और मुस्कराकर बोली : ''यह कबीरजी का घर नहीं है । उनका घर तो ब्रह्मा, विष्णु और शिव को भी नहीं मिला ।

कबीर का घर शिखर पर, जहाँ सिलहली गैल ।
पाँव न टिके पिपीलिका, पंडित लादे बैल ।।''

अर्थात् कबीरजी का घर शिखर पर यानी अनंत ब्रह्माण्डों से भी ऊपर है, जिसका मार्ग इतना फिसलनभरा है कि चींटी के पैर भी उस पर जम नहीं सकते । पंडित विद्या के अहंकाररूपी बैल को लेकर जाना चाहता है, सो कैसे जा सकता है ?

अहंकारी व्यक्ति ज्ञान के अंतिम साधन निर्विकल्प समाधि को कभी प्राप्त नहीं हो सकता ।

सर्वजित सहसा कोई उत्तर नहीं दे पाया । इतने में कबीरजी आ गये । तब सर्वजित ने उन्हें शास्त्रार्थ करने के लिए चुनौती दी । चुनौती सुनकर उन्होंने कहा : ''भाई ! मैं तो एक साधारण, अनपढ़ जुलाहा हूँ । इतनी पुस्तकें तो मैंने जीवन में कभी देखीं तक नहीं ।''

लेकिन सर्वजित शास्त्रार्थ करने के लिए जिद करने लगा और कबीरजी द्वारा पूछने पर अपनी माता की बात भी बता दी ।

तब कबीरजी बोले : ''भाई ! मैं जानता हूँ कि शास्त्रार्थ में आपसे नहीं जीत सकता । मैं अपनी हार मानता हूँ ।''

सर्वजित : ''अगर आप हार मानते हैं तो लिखकर दे दें ।''

कबीरजी : ''मैं तो लिखना भी नहीं जानता । आप स्वयं अपने हाथ से अपने अनुकूल पत्र लिख लीजिये, मैं दस्तखत कर दूँगा ।''

सर्वजित ने लिखा : 'श्री कबीर साहेब शास्त्रार्थ में हार गये और पंडित श्री सर्वजित जीत गये ।' कबीरजी ने उस पर हस्ताक्षर कर दिये । घर लौटने पर जब सर्वजित ने कागज अपनी माता को दिखाया तो उसमें लिखा हुआ मिला : 'श्री कबीर साहेब शास्त्रार्थ में जीत गये और पंडित श्री सर्वजित हार गये ।'

अपने लिखने में ही गलती हो गयी है यह सोचकर सर्वजित पुनः काशी गया और कबीरजी से एक नयी पर्ची पर हस्ताक्षर करवाकर लौटा । किंतु आश्चर्य ! इस बार भी पर्ची पर वही लिखा था । इस प्रकार विजय-पत्र में बार-बार परिवर्तन देख पंडित मूर्च्छित होकर गिर पड़ा । जब मूर्च्छा

हटी तब उसने अपनी माता से कहा : ''माँ ! ये कबीर अवश्य कोई जादूगर हैं । ये कुछ कर देते हैं और मेरा लिखा बदल जाता है ।''

उसकी माता प्रज्ञावान थी और कबीरजी की महानता से परिचित थी । वह बोली : ''हे पुत्र ! कबीरजी साधारण व्यक्ति नहीं, एक ब्रह्मज्ञानी एवं योगनिष्ठ संत हैं । स्वयं परब्रह्म परमात्मा ही करुणा करके ऐसे महापुरुषों के रूप में पृथ्वी पर नित्य अवतार लेकर आते रहते हैं । तुमने इतने इतिहास, पुराण और शास्त्र पढ़े हैं, बताओ तो सही कि किस शास्त्र में ऐसा प्रसंग आता है जिसमें कोई व्यक्ति ऐसे महापुरुष के यश को कम करके अपना नाम प्रस्थापित कर सका हो ? बेटे ! यह प्रत्यक्ष है कि जो उन्हें नीचा दिखाने का यत्न करता है, भगवान की ऐसी लीला हो जाती है कि उसको खुद को ही नीचा देखना पड़ता है ।

पुत्र ! जो व्यक्ति परिणाम का विचार किये बिना ही क्रिया करता है, वह मनुष्य नहीं पशु है । उसका जीवन अंधकारमय हो जाता है । अतः मेरी तुमसे प्रार्थना है कि अहंकार सजाने का परिणाम क्या होता है इसकी ओर ध्यान दो और जिन्होंने महापुरुषों की शरण में जाकर अपना अहंकार विलीन कर दिया ऐसे लोगों के जीवन में क्या परिवर्तन हुए इसकी ओर भी नजर डालो । उसके बाद जो तुम्हें उचित लगे सो करो ।''

माँ की बातों पर सर्वजित शांत चित्त से विचार करने लगा । बाहर के पोथे रटने में माहिर सर्वजित ने आज जीवन में पहली बार भीतर का शास्त्र खोला था । कुछ समय बाद वह उठा और नंगे पैर कबीरजी के पास जाकर उनके चरणों में दण्ड की भाँति लेट गया । इस बार उसके साथ पुस्तकों से लदा बैल नहीं है, यह देखकर कबीरजी समझ गये कि यह अहंकाररूपी बैल से भी छुटकारा पा चुका है ।

कबीरजी के चरणों में गिड़गिड़ाते हुए सर्वजित बोला : ''महाराज ! आपने तो दया करके मेरे विजय-पत्र पर हस्ताक्षर कर दिये परंतु भगवान ने उसमें मुझे ही पराजित कर मेरे अहंकार को तहस-नहस करके मुझ पर बड़ी कृपा की है । प्रभो ! आप अशरण-शरण्य हैं, मेरे अपराध को क्षमा करके मुझे अपना शिष्य बना लीजिये ।''

कबीरजी ने उसे गुरुमंत्र की दीक्षा दी और कहा : ''सर्वजित ! रटनेमात्र से कोई पंडित नहीं होता । भीतर के प्रभुप्रेम के शास्त्र का ढाई अक्षर भी जो पढ़ लेता है वही सच्चा पंडित है । अब तुम सच्चे अर्थ में पंडित बनने के रास्ते हो । जो सर्वत्याग यज्ञ करता है वही 'सर्वजित' हो जाता है और अहं का त्याग ही सर्वत्याग है ।''

सर्वानंद अब वास्तविक 'सर्वजित' बनने के रास्ते चल पड़ा और अपने सद्गुरु कबीरजी की सेवा और उनके वचनों का श्रवण-मनन-निदिध्यासन करते हुए उसने मनुष्य-जन्म का वास्तविक लक्ष्य प्राप्त कर लिया । ❑

...तो सारा जीवन ही व्यर्थ हो जायेगा

बनारस हिन्दू यूनिवर्सिटी के प्राध्यापक श्री दे महाशय का प्रतिदिन कुछ मिनट भगवान का भजन करने का नियम था । एक दिन कुछ नास्तिक प्रोफेसरों ने उन्हें छेड़ने के उद्देश्य से कहा : ''ईश्वर तो है नहीं, फिर आप व्यर्थ ही क्यों कुछ मिनट खराब करते हैं ?''

सभीने सोचा कि 'अब दे साहब ईश्वर के अस्तित्व के बारे में बड़े-बड़े तर्क देंगे और हम सब मिलकर उन तर्कों को काटते जायेंगे ।' परंतु महाबुद्धिमान दे साहब ने सोचा, 'मिर्च का जवाब मसाले से देने पर ही सामनेवाले को जल्दी हजम होगा ।'

दे साहब बोले : ''भाई ! ईश्वर न होने पर तो मेरे कुछ मिनट ही खराब होंगे परंतु यदि वह कहीं निकल आया तो तुम लोगों का तो सारा जीवन ही व्यर्थ हो जायेगा ।''

सारे नास्तिक प्रोफेसरों की बोलती ही बंद हो गयी ।

भक्ति व्यर्थ नहीं जाती

(पूज्य बापूजी के सत्संग-प्रवचन से)

व्यक्ति अगर दुष्ट विषय-विकारों के पीछे जाता है तो दुरात्मा हो जाता है । सामान्य जीवन जीता है- थोड़ा संयम, थोड़ी फिसलाहट तो सामान्य आत्मा होता है लेकिन महान परमात्मा में विश्रांति पाकर भगवत्प्रीति, भगवद्ज्ञान से भर जाता है, निष्काम कर्म करता है तो वह महान आत्मा हो जाता है । भगवान कहते हैं :

महात्मानस्तु मां पार्थ दैवीं प्रकृतिमाश्रिताः ।
भजन्त्यनन्यमनसो ज्ञात्वा भूतादिमव्ययम् ।।

'हे कुंतीपुत्र ! दैवी प्रकृति के आश्रित महात्माजन मुझको सब भूतों का सनातन कारण और नाशरहित अक्षरस्वरूप जानकर अनन्य मन से युक्त होकर निरंतर भजते हैं ।' **(गीता : ९.१३)**

जो दैवी प्रकृति का आश्रय लेते हैं, उनमें अपने नित्य, चैतन्यस्वरूप परमात्मस्वभाव के संस्कार पड़ते हैं और किसी कारण वे किसी हलकी योनि में चले गये तो भी उन संस्कारों का नाश नहीं होता । जैसे - राजा भरत, जिनके नाम से इस देश का नाम भारत पड़ा, उन्होंने हिरण का चिंतन करते-करते शरीर का त्याग किया तो उन्हें हिरण की योनि में आना पड़ा लेकिन वहाँ भी उनके पूर्वजन्म के भक्ति के संस्कार देखे गये । मैं उझानी (उ.प्र.) गया था, तब वहाँ एक कुत्ता देखा जो मंगलवार का व्रत रखता था ।

ममैवांशो जीवलोके जीवभूतः सनातनः ।
(गीता : १५.७)

तो हिरण के शरीर में, कुत्ते के शरीर में भी कई फिसले हुए साधक देखे-सुने-पाये जाते हैं । पिछले जन्म का करोड़पति अभी जन्मजात करोड़पति हो जाय यह जरूरी नहीं है । पिछले जन्म का डॉक्टर अभी बिना पढ़े डॉक्टर नहीं हो सकता लेकिन पिछले जन्म का साधक अपनी साधना की ऊँचाइयों को जन्मजात छुआ हुआ मिलता है ।

अष्टावक्रजी माँ के गर्भ में से ही ब्रह्मज्ञान की बात कर रहे थे । अयोध्या की रानी साहिबा की ओर से वहाँ के कनक भवन मंदिर की सेवा में श्यामा नाम की एक घोड़ी रखी गयी थी । उसके जीवन में भी कैसी सूझबूझ ! घोड़ी बुढ़िया हो गयी थी इसलिए जब उसे मंदिर से निकालने का निर्णय लिया गया तो घोड़ी ने चारा और पानी छोड़ दिया । वह वहाँ से जाना नहीं चाहती थी । रानी साहिबा का आदेश मानकर अधिकारियों ने उसे भेजने के लिए बिल्टी (रसीद) निकलवायी । घोड़ी को रस्सियों से बाँधकर पशुवाहक डिब्बे में बिठा दिया गया लेकिन घोड़ी के संकल्प ने क्या किया, कैसी व्यवस्था हो गयी कि गार्ड की भूल से ट्रेन में वह डिब्बा जोड़ा ही नहीं गया । घोड़ी फिर कनक भवन में लायी गयी । सब लोग दंग रह गये कि घोड़ी का संकल्प भी कैसी ईश्वरीय लीला करवा देता है !

मनुष्य-शरीर में की हुई साधना हिरण के शरीर में, कुत्ते के शरीर में, घोड़े के शरीर में भी फलती है । अगर मनुष्य बुद्धियोग का आश्रय लेकर भगवत्परायण हो जाय, तब तो इसी जन्म में काम बन सकता है और किसी गलती से अधूरा रह गया, किसी पाप से, किसी कारण से, किसी हलके चिंतन से हलकी योनि में गये तब भी साधुताई का और संकल्पबल का प्रभाव इन घटनाओं से प्रत्यक्ष होता है । तो जितना हो सके छोटी-छोटी बातों में अपनी आदत बुरी न होने दो और भगवत्प्रसादजा मति के बल से भगवत्सुमिरन की, सुख-दुःख में सम रहने की, सेवा की ऊँची आदत डालो ।

सूरदास प्रीतम बने संत प्रीतमदासजी

(श्री प्रीतमदासजी महाराज पुण्यतिथि : २१ मई)

(पूज्य बापूजी के सत्संग-प्रवचन से)

संत प्रीतमदासजी का जन्म अमदावाद के पास बावला गाँव में सन् १७१७ से १७२३ के बीच बताया जाता है । वे जन्म से ही सूरदास (नेत्रहीन) थे । १० वर्ष की उम्र में ही उनके माता-पिता उन्हें छोड़कर चल बसे । वे बेचारे भिक्षा माँगकर अपना गुजारा करते थे और कभी कहीं पड़े रहते तो कभी कहीं । १० वर्ष की उम्र में ही जो दर-दर की ठोकरें खा रहे थे, वे ही प्रीतमदास धक्के-मुक्के सहते हुए एक बार भगवत्कथा में पहुँच गये । संत भाईदासजी के प्रति उन्हें आदर हो गया । उनसे गुरुमंत्र लेकर वे उनकी मंडली में शामिल हो गये और गुरु-आश्रम में समर्पित हो गये । सूरदास थे इसलिए जगत का आकर्षण तो था नहीं, अतः पूरा आकर्षण ईश्वर के लिए हो गया । फिर तो उनमें ऐसी-ऐसी दिव्यताएँ आयीं कि वे संत प्रीतमदास हो गये । उन्हें ऐसी-ऐसी कविताएँ स्फुरित हुईं कि विदेशी लोग भी उनकी प्रशंसा किये बिना न रह सके ! उन्हींकी बनायी हुई यह आरती है :

आनंद मंगल करुं आरती, हरि गुरु संतनी सेवा...

एक बार वे भगवान डाकोरजी के दर्शन करने गये। पुजारी ने उनका मखौल उड़ाया कि 'आप तो सूरदास हैं, आप क्या दर्शन कर रहे हैं ?' तब उन्होंने भगवान के सारे श्रृंगार का काव्यात्मक वर्णन कर उसे बताया कि 'आज तुमने भगवान को इस रंग के वस्त्र पहनाये हैं । भगवान के आगे कमल का फूल रखा है लेकिन वह बायीं ओर रखा है जो दायीं ओर होना चाहिए । बंसी इस ढंग से रखी है, वह ऐसे होनी चाहिए । मुकुट ऐसा है...' थे तो वे सूरदास, जन्मजात अंधे किंतु भगवान डाकोरजी के श्रृंगार का यथावत् वर्णन कर दिया । यह देखकर पुजारी दंग रह गया और उनके चरणों में गिर पड़ा ।

जिनका मन प्रभु के चरणों में लीन हो चुका है, वे बाहर की आँखों के बिना भी प्रभु के दर्शन कर लेते हैं ।

एक बार रोमां रोलां की संस्था के लोग हिन्दुस्तान में आध्यात्मिकता देखने को आये । उन्होंने देखा कि प्रीतमदासजी नेत्रहीन थे किंतु उन्होंने जो कविताएँ लिखवायी हैं, उनसे बढ़कर प्रेमाभक्ति की कविताएँ हो नहीं सकतीं । रोमां रोलां की संस्थावाले वे कविताएँ अपने साथ ले गये थे ।

प्रीतमदासजी ने सन् १७९७ में शरीर छोड़ा । आणंद (गुजरात) के पास संदेसर नामक स्थान पर प्रीतमदासजी की समाधि है ।

गुरु की महिमा बताते हुए प्रीतमदासजी ने कहा है :

गुरुपद प्रेमे पूजिये, प्रगटे ज्ञान प्रकाश ।
कहे प्रीतम एक पलकमां, करे अविद्या नाश ।।
गुरु गोविंद तें अधिक हैं, शुद्ध चित्ते करी जोय ।
कहे प्रीतम करुणा करे, आवागमन न होय ।।
गुरुकुं माने मानवी, देखे देह व्यवहार ।
कहे प्रीतम संशय नहि, पड़े नरक मोझार[1] ।।
जाके मस्तक गुरु नहि, सो नर नुगरा[2] जाण ।
कहे प्रीतम पातक नहि, पुरुष नहि पाषाण ।।
चन्द्र बिना जेम जामनी[3], कंथ[4] बिना जेम नार ।
कहे प्रीतम एम गुरु बिना, प्राणी पशु गमार[5] ।।
गुरुकुं तन मन सोंपीए, सर्वस प्राणसमेत ।
कहे प्रीतम भवसिंधु में, बूड़त भुज ग्रही लेत ।। □

१. में २. निगुरा ३. रात्रि ४. पति ५. गँवार ।

मोक्ष की कुंजी

(पूज्य बापूजी के सत्संग-प्रवचन से)

सारे दुःख, सारी तकलीफें यदि सदा-सदा के लिए मिटानी हैं तो दर्दशामक गोलियों से नहीं मिटेंगी, उसके लिए किन्हीं ऐसे महापुरुष के पास जाना होगा जो अपने निजस्वरूप, 'सोऽहम्' स्वभाव में स्वयं टिके हुए हों और दूसरों को टिकाने का सामर्थ्य रखते हों।

अपने 'सोऽहम्' स्वरूप में टिकने की साधना मोक्ष की साधना है, दुःखों की आत्यंतिक निवृत्ति और परमानंदप्राप्ति की साधना है, ईश्वरप्राप्ति की साधना है। श्वास अंदर जाता है उसमें मिला दो 'सोऽऽऽ' और बाहर आता है उसमें मिला दो 'हम्' और भावना करो : 'जिसकी सत्ता से आँख देखती है, वह चैतन्य मैं हूँ। जिसकी सत्ता से हाथ उठते हैं, वह चैतन्य मैं हूँ। मरने के बाद भी जो रहता है, वह मैं हूँ। मैं शांत आत्मा हूँ, चैतन्य आत्मा हूँ, सुखस्वरूप हूँ, अमर हूँ, ईश्वर का अविभाज्य अंश हूँ। जिस 'सोऽहम्' स्वभाव में गोता लगाकर मेरे गुरुजी शांत, आनंदित और समर्थ हुए, उसीमें गोता लगाकर मैं शांतात्मा हो रहा हूँ। मैं अपने गुरुस्वभाव से, गुरुदेव से मिल रहा हूँ। **सोऽहम्, चैतन्योऽहम्, शाश्वतोऽहम्, इष्टसन्तानोऽहम्, सोऽहम्...** अब हम दुर्जनों से दबेंगे नहीं। सद्गुरु और परमात्मा को दूर नहीं मानेंगे, पराया नहीं मानेंगे। सोऽहम्...' यह मोक्ष की कुंजी है; 'मास्टर की' है मोक्ष की, दुःखों को भगाने की। रोगों को मिटाने में भी यह आनंदरस काम देगा।

रात्रि को सावधानी से 'सोऽहम्' जपते-जपते सो जायें। सुबह जगें तो जो श्वास चल रहा है उसमें 'सोऽहम्' को देखें। श्वास अंदर जाता है तो 'सोऽऽऽ', बाहर आता है तो 'हम्...'। इस प्रकार जप सदा चलता ही रहता है, केवल हम भूल गये। अभ्यास करो तो यह भूल हटे। चौबीसों घंटे यह जीव 'अजपा जप' करता रहता है। उसको यह पता चल जाय तो निहाल हो जाय।

मानसिक जप सतत चलने लगा तो प्रो. तीर्थराम में से स्वामी रामतीर्थ हो गये। सबसे उत्तम, सभी लोग कर सकें ऐसी सरल साधना है - मंत्रजप, भगवन्नाम-जप। जपते-जपते ऐसी आदत पड़ जाय कि होंठ हिलें नहीं, जीभ चले नहीं, फिर भी हृदय में जप चलता रहे। मंत्र के अर्थ में मन गमन करता रहे। जप करते-करते उसके अर्थ में ध्यान लगे और मन को स्वाद आ जाय तो फिर उसमें लगता रहेगा व परमात्मा तो अपना आत्मा होकर चमचम चमकेगा। ईश्वर की तरफ से देर नहीं है। हँसते-खेलते ईश्वर का आनंद, ईश्वर का माधुर्य और ईश्वर की प्रेरणा मिलेगी।

पैसा कमाना मना नहीं है, औषध खाना मना नहीं है, हास्य करना मना नहीं है। मैं तो कहता हूँ विषाद करना भी मना नहीं है, दुःखी होना मना नहीं है लेकिन दुःख को योग बना दो। विषाद को योग बना दो। चिपको मत... किसी चीज में चिपको मत। धन में चिपको मत, वह रहेगा नहीं। काम में, क्रोध में, प्रशंसा में, निंदा में चिपको नहीं। ये सब आने-जानेवाले हैं, तुम सदा रहनेवाले हो। शरीर में चिपको नहीं, यह बूढ़ा होनेवाला है, मरनेवाला है। तुम अमर हो इस प्रकार का दृढ़ ज्ञान रखो तो तुम्हारे लिए संसार आनंदवन बन जायेगा, सुखालय हो जायेगा। **(शेष पृष्ठ २४ पर)**

मौन का संदेश

– महात्मा गाँधी

मैं दक्षिण अफ्रीका में एक मठ देखने गया था। वहाँ के अधिकांश निवासियों ने मौनव्रत ले रखा था। मैंने मठ के मुख्य व्यवस्थापक से पूछा कि ''इसका हेतु क्या है ?'' उसने कहा : ''हेतु तो प्रकट ही है – अगर हमें उस छोटी-सी मूक आवाज को सुनना है, जो सदा हमारे भीतर बोलती रहती है तो वह हमें सुनायी नहीं देगी– यदि हम लगातार बोलते रहेंगे।''

मैंने वह कीमती पाठ समझ लिया। मुझे मौन का रहस्य मालूम है। अल्पभाषी मनुष्य अपनी वाणी में क्वचित् ही विचारहीन होता है, वह एक-एक शब्द को तौलेगा। कितने ही आदमी बोलने के लिए अधीर दिखायी देते हैं। अगर हम उद्विग्न प्राणी मौन का महत्त्व समझ लें तो दुनिया का आधा दुःख खत्म हो जायेगा। हम पर आधुनिक सभ्यता का आक्रमण होने से पहले हमें २४ में से कम-से-कम ६ से ८ घंटे मौन के मिलते थे। आधुनिक सभ्यता ने हमें रात को दिन में और मूल्यवान मौन को व्यर्थ के शोरगुल में बदलना सिखा दिया है। यह कितनी बड़ी बात होगी अगर हम अपने व्यस्त जीवन में रोज कम-से-कम दो घंटे अपने मन के एकांत में चले जायें और हमारे भीतर जो महान मौन की वाणी है उसे सुनने की तैयारी करें। अगर हम सुनने को तैयार हों तो ईश्वरीय रेडियो तो हमेशा गाता ही रहता है परंतु मौन के बिना उसे सुनना असंभव है।

मेरे लिए यह (मौन) अब शारीरिक और आध्यात्मिक, दोनों प्रकार की आवश्यकता बन गया है। शुरू-शुरू में यह कार्य के दबाव से राहत पाने को लिया जाता था। इसके सिवा मुझे लिखने को समय चाहिए था। परंतु थोड़े दिन के अभ्यास के बाद मुझे इसका आध्यात्मिक मूल्य मालूम हो गया। मेरे मन में अचानक यह विचार दौड़ गया कि यही समय है जब मैं ईश्वर से अच्छी तरह लौ लगा सकता हूँ।

मेरे जैसे सत्य के जिज्ञासु के लिए मौन बड़ा सहायक है। मौनवृत्ति में आत्मा को उसका मार्ग अधिक स्पष्ट दिखायी देता है और जो कुछ पकड़ में नहीं आता या जिसे समझने में भ्रम की संभावना होती है, वह स्फटिक की तरह स्पष्ट दिखायी देने लगता है। हमारा जीवन सत्य की एक खोज है और आत्मा को अपनी पूरी ऊँचाई तक पहुँचने के लिए भीतरी विश्राम और शांति की जरूरत होती है। ❑

(पृष्ठ ९ 'मन को वश करने के उपाय' का शेष)

मन की चंचलता इतनी दोषी नहीं, जितनी मन की वासनाएँ, छल, छिद्र, कपट दोषी हैं। हम नहीं चाहेंगे तब तक ये निकल नहीं सकते। हम इनको पोसते रहे तो लाख उपाय करें, दुःखों का अंत नहीं होगा और इन लुच्चों को उखाड़कर फेंकें तो परम सुख, परम आनंद, परम वैभव अपना आत्मसुख, आत्मसंतोष, आत्मतृप्ति प्रकट हो जायेगी।

(१३) विवेक करें : छल, छिद्र, कपट, मोह, अहंकार और वासना से दुःख बढ़ता है। इन बदमाशों से दोस्ती न करो, इनको पोषण न दो। काहे को झूठ-कपट करना ? काहे को निगुरे लोगों की बातों में आना ? निगुरा दे-देकर क्या देगा ? उसको भगवान मिल गये हैं क्या, उसको आत्मशांति मिल गयी है क्या ? तो वह हमको सुख-शांति क्या देगा ? उसने गुरुकृपा पचायी है पूरी ? निगुरा आदमी क्या सुखी हो गया जो उसकी बातों में आयें ? ❑

सफलता का रहस्य

(गतांक से आगे)

नटखट नागर भगवान श्रीकृष्ण मक्खन चुराते, साथियों को खिलाते, खाते और दही-मक्खन की मटकियाँ फोड़ते थे। फिर थोड़ा-सा मक्खन बछड़ों के मुँह पर लगाकर भाग जाते। घर के लोग बछड़ों के मुँह पर लगा हुआ मक्खन देखकर उन्हींकी यह सब करतूत होगी, यह मानकर बछड़ों को पीटते।

वास्तव में सबका कारण एक ईश्वर ही है। बीच में बेचारे बछड़े पीटे जाते हैं। 'मैं... तू... यह... वह... सुख... दुःख... मान... अपमान... फाँसी की सजा...' सबका कारण तो मूल चैतन्य परमात्मा है लेकिन उस परमात्मा से बेवफाई करके मनरूपी बछड़े बेचारे पीटे जाते हैं।

बड़े-से-बड़ा परमात्मा है और उससे नाता जुड़ता है तब बेड़ा पार होता है। केवल नाम बड़ा रखने से कुछ नहीं होता। हैं कंगले-दिवालिये, घर में कुछ नहीं है और नाम है करोड़ीमल, लखपतराम, हजारीप्रसाद, लक्ष्मीचंद। इससे क्या होगा ?

गोबर ढूँढ़त है लक्ष्मी, भीख माँगत जगपाल।
अमरसिंह तो मरत है, अच्छो मेरो ठनठनपाल॥

बड़े महल बनाने से, बढ़िया गाड़ियाँ रखने से, बढ़िया हीरे-जवाहरात पहनने से सच्ची सुख-शांति थोड़े ही मिलती है ! भीतर के आनंदरूपी धन से तो कंगाल ही हैं। जो मनुष्य भीतर से कंगाल है उसको उतनी ही बाह्य चीजों की गुलामी करनी पड़ती है। बाह्य चीजों की जितनी गुलामी रहेगी उतना आत्मधन से आदमी कंगाल होगा।

किसीके पास आत्मधन है और बाह्य धन भी बहुत है तो उसको बाह्य धन की उतनी लालसा नहीं होती। प्रारब्धवेग से सब मिलता है। आत्मधन के साथ सब सफलताएँ भी आती हैं। आत्मधन से धनी हो गये तो बाह्य धन की इच्छा नहीं रहती, वह धन अपने-आप खिंचकर आता है। जैसे व्यक्ति आता है तो उसके पीछे छाया भी आ ही जाती है, ऐसे ही ईश्वरत्व की मस्ती आ गयी तो बाह्य सुख-सुविधाएँ प्रारब्धवेग से आ ही जाती हैं। नहीं भी आतीं तो उनकी आकांक्षा नहीं होती है। ईश्वर का सुख ऐसा है ! जब तक बचपन है, बचकानी बुद्धि है तब तक गुड्डे-गुड्डियों से खेलते हैं। बड़े हो गये, जवान हो गये, शादी हो गयी तो गुड्डे-गुड्डियों का खेल कहाँ रुचेगा ? बुद्धि बालिश होती है तो जगत में आसक्ति होती है। बुद्धि विकसित होती है, विवेकसम्पन्न होती है तो जगत की वस्तुओं की पोल खुल जाती है। विश्लेषण करके देखो तो सब पंचभूतों का पसारा है। मूर्खता से जब गुड्डे-गुड्डियों से खेलते रहे तो खेलते रहे लेकिन बात समझ में आ गयी तो वह खेल छूट गया। ब्रह्म से खेलने के लिए आप पैदा हुए हो, परमात्मा से खेलने के लिए आप जन्मे हो, न कि इन गुड्डे-गुड्डीरूपी संसार के कार्य-कारण के साथ खेलने के लिए। मनुष्य-जन्म ब्रह्म-परमात्मा से तादात्म्य साधने के लिए, ब्रह्मानंद पाने के लिए मिला है।

जवान लड़की को पति मिल जाता है फिर वह गुड्डे-गुड्डियों से थोड़े ही खेलती है। ऐसे ही हमारे मन को परम पति परमात्मा मिल जाय तो संसार के गुड्डे-गुड्डियों में आसक्ति थोड़े ही रहेगी।

कठपुतलियों का खेल शुरू होता है। उस खेल में एक राजा ने दूसरे राजा को बुलाया। वह अपने दरबारियों के साथ आया। उसका स्वागत किया गया, मेजबानी हुई। फिर बात-बात में आपस में नाराजगी हुई। दोनों ने तलवार निकाली, लड़ाई हो गयी। दो कटे, चार मरे, छः भागे...

(शेष पृष्ठ १९ पर)

स्वभाव का सुधार

अभिमान और स्वार्थ-भावना ये दो बहुत बड़े दोष हैं । ये दोनों स्वभाव बिगाड़नेवाले हैं । इनसे अपना पतन होता है और दूसरों को दुःख होता है । अभिमान और स्वार्थ की भावना दूर करें तो स्वभाव सुधर जाय ।

व्यक्ति चाहता है एक तो मेरी बात रहे और दूसरा मेरा मतलब सिद्ध हो जाय । वह हरेक बात में इसी ताक में रहता है । 'मेरे को धन मिल जाय, मान मिल जाय, आदर मिल जाय, आराम मिल जाय...' – यह भाव रहता है न, इससे स्वभाव बिगड़ता है । तो अभिमान से, अहंकार से, स्वार्थबुद्धि से स्वभाव बिगड़ता है । दोनों जगह निरभिमान हो करके –

सरल सुभाव न मन कुटिलाई ।
जथा लाभ संतोष सदाई ।।

(श्रीरामचरित. उ.कां. : ४५.१)

कपट गाँठ मन में नहीं सब सों सरल सुभाव ।
नारायण वा भगत की लगी किनारे नाव ।।

कोई कपट करे तो उसके साथ भी कपट नहीं तथा **'मंद करत जो करइ भलाई'** ऐसा जिसका स्वभाव है, उसको याद करने से शांति मिलती है । ऐसी सरलता धारण करने में क्या परिश्रम है, बताओ ? कुटिलता करने में आपको परिश्रम होगा । कुछ-न-कुछ मन में कपट-गाँठ गूँथनी पड़ेगी न ! सीधे, सरल स्वभाव में है – जैसी बात है वैसी कह दी । झूठ-कपट करोगे तो कई बातें ख्याल में रखनी पड़ेंगी, फिर कहीं-न-कहीं चूक जाओगे, कहीं-न-कहीं भूल जाओगे; सच्ची बात है । सरलता है तो सब जगह मौज-ही-मौज है । अपने स्वार्थ और अभिमान का त्याग कर दूसरे के हित का सोचो । कैसे हित हो ? क्या करूँ ? कैसे करूँ ? दूसरों का कल्याण कैसे हो ? दूसरों को सत्संग, सत्संस्कार कैसे मिलें, जिससे वे सुखी हों, संतुष्ट हों ? – ऐसा सोचते रहो । आपके पास धन न हो तो परवाह नहीं, विद्या नहीं हो तो परवाह नहीं, कोई योग्यता नहीं, कोई पद नहीं, कोई अधिकार नहीं हो तो कोई परवाह नहीं । ऐसा न होते हुए भी आपका भाव होगा दूसरों का हित करने का तो स्वभाव शुद्ध होता चला जायेगा । जहाँ झूठ, कपट, अभिमान, अपनी हेकड़ी रखने का स्वभाव होगा, वहाँ स्वभाव बिगड़ता चला जायेगा । वह बिगड़ा हुआ स्वभाव पशु-पक्षी आदि शरीरों में भी तंग करेगा । वहाँ भी आपको सुख से नहीं रहने देगा । अच्छे स्वभाववाला पशु-योनि में भी सुख पायेगा, मनुष्य भी श्रेष्ठ हो जायेगा ।

स्वभाव सुधारने का मौका यहाँ ही है । जैसे जहाँ बाजार होता है वहाँ रुपयों से चीज मिल जाती है । जंगल में रुपये पास में हों तो क्या चीज मिलेगी ? यह बाजार तो यहाँ ही अभी लगा हुआ है । इस बाजार में आप अपना स्वभाव शुद्ध बना लो, निर्मल बना लो । यहाँ सब तरह की सामग्री मिलती है । मनुष्य-शरीर से चल दिये तो फिर जैसे हो वैसे ही रहोगे । फिर बढ़िया तो नहीं होगा, घटिया हो सकता है । वहाँ (दूसरी योनि में) भी स्वभाव खराब हो सकता है परंतु वहाँ उसको बढ़िया बात मिलनी बड़ी कठिन है । कुछ बढ़िया मिलेगी भी तो सांसारिक बातें मिलेंगी, पारमार्थिक नहीं । वहाँ स्वभाव का सुधार नहीं हो सकता है । बढ़िया शिक्षक मिल जायेगा तो वह शिक्षित हो जायेगा, मर्यादा में चलेगा; नहीं तो ऐब पड़ जायेगा तो उम्र भर दुःख पायेगा ।

पशु को बचपन में ही ऐब (खराब आदत) हो

जाता है न, तो वह दुःख देनेवाला, मारनेवाला बन जाता है । मारने की आदत पड़ने से उकसाने से वह दुःख देनेवाला बन जाता है और जीवन भर मार का दुःख झेलता ही है । तो बुरा स्वभाव बन जायेगा पशु-योनि में भी । अतः बुराई तो वहाँ भी मिल जायेगी, भलाई का मौका तो यहाँ ही है । यहाँ भी हर समय नहीं । सत्संग मिलता है, विचार मिलता है, सत्शास्त्र मिलता है तो इन बातों से हमें अच्छाई सीखनी चाहिए, मौका खोना नहीं चाहिए ।

बड़ें भाग मानुष तनु पावा ।
सुर दुर्लभ सब ग्रंथन्हि गावा ।।

(श्रीरामचरित. उ.कां. : ४२.४)

जो देवताओं के लिए भी दुर्लभ है ऐसा मानव-शरीर मिला है तो अपना स्वभाव शुद्ध बना लें, निर्मल बना लें । फिर मौज-ही-मौज ! यह पूँजी सदा साथ में रहनेवाली है क्योंकि जहाँ कहीं जाओगे तो स्वभाव तो साथ में रहेगा ही । बिगड़ा हुआ होगा तो बिगड़ा हुआ ही साथ रहेगा । जहाँ कहीं जाओ तो स्वभाव को निर्मल बनाओ । अहंकार तथा अपने स्वार्थ का त्याग करके 'दूसरों का हित कैसे हो ? अपने तन से, मन से, वचन से, विद्या से, बुद्धि से, योग्यता से, अधिकार से, पद से किसी भी तरह दूसरों को सुख कैसे हो ? दूसरों का कल्याण कैसे हो ?'- ऐसा भाव रहेगा तो आप ऐसे निर्मल हो जायेंगे कि आपके दर्शन से भी दूसरे लोग निर्मल हो जायेंगे ।

तन कर मन कर वचन कर, देत न काहू दुःख ।
तुलसी पातक झरत है, देखत उसका मुख ।।

उसका मुख देखने से पाप दूर होते हैं । आप भाई-बहन सब बन सकते हो ऐसे । अब मीराबाई ने हमको क्या दे दिया ? परंतु उनके पद सुनते हैं, याद करते हैं तो चित्त में प्रसन्नता होती है, गाते हैं तो भगवान के चरणों में प्रेम होता है । उनके भीतर प्रेम भरा था, सद्भाव भरा था, इसलिए मीराबाई अच्छी लगती हैं । वे हमारे बीच नहीं आयीं फिर भी उनका उन्नत स्वभाव हमारी उन्नति करता है । उनकी बात भी अच्छी लगती है, उनके पद अच्छे लगते हैं क्योंकि उनका अंतःकरण शुद्ध था, निर्मल था । नहीं तो मीराबाई की जो सास थी वह पूजनीया थी मीराबाई के लिए, पर उसका नाम भी नहीं जानता कोई । मीराबाई विदेशों तक सब जगह प्रसिद्ध हो गयीं, भगवान की भक्ति होने से, नाम चाहने से नहीं ।

गृहस्थ कहते हैं : 'बेटा हो जाय तो हमारा नाम हो जाय ।' बेटा कइयों को हुआ पर नाम हुआ ही नहीं, पद कइयों को मिला पर थोड़े दिन हुए तो टिका नहीं । तीन-चार पीढ़ी के पहलेवालों को आज घरवाले ही नहीं जानते, दूसरे क्या जानेंगे ! भगवान का भजन करो तो भैया ! कितनी बड़ी बात है कि नाम रहे-न-रहे आपका कल्याण हो जायेगा, दुनिया का बड़ा भारी हित होगा । इसलिए अपने स्वभाव को शुद्ध बना लें । शुद्ध कैसे बने ?

अपनी हेकड़ी छोड़ें, अपना अभिमान छोड़ दें और दूसरों का आदर करें, दूसरों का हित करें । दो विभिन्न बातें सामने आ जायें और दूसरे की बात न्याययुक्त है, बढ़िया है तो अपनी बात छोड़कर उनकी बात मानें । हमारी नहीं उनकी सही । दोनों बढ़िया होने पर भी उनकी बात का आदर करने से अपने स्वभाव का सुधार होता है । ❑

(पृष्ठ १७ 'सफलता का रहस्य' का शेष)

दिखता तो बहुत सारा है लेकिन है सब सूत्रधार की उँगलियों की करामात । ऐसे ही इस संसार में बाहर कार्य-कारण दिखता है लेकिन सबका सूत्रधार अंतर्यामी परमात्मा एक-का-एक है । अच्छा-बुरा, मेरा-तेरा, यह-वह सब दिखता है लेकिन सबका मूल केन्द्र तो अंतर्यामी परमात्मा ही है । उस महाकारण में अपने मैं को विश्रांति दिला दो, उसमें एकाकार हो जाओ तो बाहर के कार्य-कारण खिलवाड़मात्र लगेंगे ।

(आश्रम से प्रकाशित पुस्तक 'जीवन विकास' से क्रमशः) ❑

जो करते प्रणाम, हो जाते महान

जितने भी महापुरुष हुए हैं वे सब-के-सब पहले बालक थे, किशोर थे। अतः विद्यार्थियों को सोचना चाहिए कि जब इतने सारे बालक एवं किशोर महान हो सकते हैं तो हम क्यों नहीं ? बड़प्पन का अभिमान तो नहीं होना चाहिए पर अपनी सुषुप्त शक्तियों को जगाकर अंतरात्मा की महानता को प्रकट करने की महत्त्वाकांक्षा तो होनी ही चाहिए। वह तो हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है।

महान बनने के लिए क्या करें ? अपने माता-पिता एवं सद्गुरु को प्रतिदिन प्रणाम करें, उनकी आज्ञा का पालन करें, उनकी सेवा करें, उनके अनुकूल बनें। भगवान श्रीकृष्ण ने अर्जुन को निमित्त बनाकर मानवमात्र को अपनी आत्मिक महानता को जगाने की कुंजी प्रदान की है :

तद्विद्धि प्रणिपातेन परिप्रश्नेन सेवया।
उपदेक्ष्यन्ति ते ज्ञानं ज्ञानिनस्तत्त्वदर्शिनः ॥

'उस ज्ञान को तू तत्त्वदर्शी ज्ञानियों के पास जाकर समझ, उनको भलीभाँति दण्डवत् प्रणाम करने से, उनकी सेवा करने से और कपट छोड़कर सरलतापूर्वक प्रश्न करने से वे परमात्म-तत्त्व को भलीभाँति जाननेवाले ज्ञानी महात्मा तुझे उस तत्त्वज्ञान का उपदेश करेंगे।' **(भगवद्गीता : ४.३४)**

आत्मज्ञानी सद्गुरु को दण्डवत् प्रणाम करने की कितनी महत्ता भगवान बता रहे हैं !

प्रणाम करने से आयु कैसे बढ़ती है ? इतिहास पर दृष्टि डालें तो इसके अनेक उदाहरण देखने को मिलते हैं।

मृकण्डु नाम के एक ऋषि थे। उनके पुत्र का नाम था मार्कण्डेय। एक आत्मज्ञानी महापुरुष श्री मृकण्डु ऋषि के आश्रम में आये। ऋषि ने मार्कण्डेय से कहा : ''बेटा ! नमस्कार करो।''

बेटे ने बड़ी विनम्रता से प्रणाम किया। वे महापुरुष मार्कण्डेय की ओर एकटक देख रहे थे। श्री मृकण्डु ऋषि ने पूछा : ''क्या देखते हो महाराज ?''

अंतर्यामी महापुरुष बोले : ''बच्चा तो अच्छा है पर इसकी उम्र बहुत थोड़ी रह गयी है।''

ऋषि ने पूछा : ''महाराज ! क्या करें ?''

''ऋषिवर ! आपके सुपुत्र ने मुझे प्रणाम किया है। इस विनम्र बालक के हित का मार्ग मैं अवश्य कहूँगा।''

महापुरुष ध्यानस्थ हो गये। कुछ समय बाद आँखें खोलकर बोले : ''मृकण्डुजी ! भगवान के साक्षात् स्वरूप, पृथ्वी पर के चलते-फिरते तीर्थराज तो आत्मज्ञानी संत-महापुरुष ही होते हैं। वे विनम्रतापूर्वक प्रणाम करनेमात्र से प्रसन्न हो जाते हैं, इसलिए भगवान आशुतोष के प्रकट रूप ही माने जाते हैं। यदि आपका बालक करुणासागर महापुरुषों को ऐसे ही श्रद्धा-भक्तिपूर्वक प्रणाम करता रहेगा तो इसे महापुरुषों का मार्गदर्शन प्राप्त होगा और एक दिन यह नया इतिहास रच डालेगा। धर्मशास्त्र की इस उक्ति की महिमा को उजागर करेगा :

अभिवादनशीलस्य नित्यं वृद्धोपसेविनः।
चत्वारि तस्य वर्धन्ते आयुर्विद्या यशोबलम् ॥

अर्थात् नित्य बड़ों को प्रणाम करने से तथा उनकी सेवा करने से मनुष्य की आयु, बुद्धि, यश और बल - ये चारों बढ़ते हैं।''

बालक बड़ी ही विनम्रता से महापुरुषों को प्रणाम करता रहा। एक दिन सप्तर्षि वहाँ आये। मार्कण्डेय ने प्रणाम किया। सप्तर्षियों ने आशीर्वाद दिया : ''चिरंजीवी होओ।''

मृकण्डुजी बोले : ''महाराजश्री ! आपने आशीर्वाद तो दे दिया है पर इसकी उम्र तो कम

है । आपका आशीर्वाद पूर्णरूप से फले इसका उपाय बताने की कृपा करें ।''

सप्तर्षि बोले : ''ऋषिवर ! यह भगवान शंकर की आराधना करे । यह आपके कुल का नाम रोशन करेगा ।''

वह श्रद्धालु बालक सप्तर्षियों के वचन को गुरुवचन मानकर शिवजी की आराधना में लग गया ।

प्रारब्ध के अनुसार जब उसकी आयु पूरी हुई तब यमराज आ गये । बालक यमराज का रूप देखकर डर गया । उसने शिवलिंग को बाँहों में पकड़ लिया और आर्तभाव से पुकारने लगा : 'हे भयहर्ता ! हे शरणागतरक्षक प्रभो **! रक्ष माम्, रक्ष माम् !** मेरी रक्षा कीजिये, रक्षा कीजिये ।''

भगवान शंकर त्रिशूल लेकर प्रकट हुए । यमराज से बोले : ''इसे क्यों ले जाना चाहते हो ?''

यमराज बोले : ''इसकी उम्र पूरी हो गयी है ।''

''फिर एक बार देखो, जरा ध्यान से देखो ।''

यमराज ने देखा तो उनके आश्चर्य का ठिकाना न रहा । मार्कण्डेय के भाग्य में उन्हें मृत्युवेला के कहीं दर्शन ही नहीं हो रहे थे । वे उलटे पैर लौट गये । **शंकर करे सो हो जाय ।**

भगवान आशुतोष बोले : ''मार्कण्डेय ! मेरे ही स्वरूप ज्ञानी महापुरुषों के वचनों को शिरोधार्य कर मेरी भक्ति, मेरे नाम-जप से तुम मुझ शिव आत्मा में शांत होते गये । मैं तुम पर परम प्रसन्न हूँ । तुम कल्प के अंत तक अमर रहोगे, चिरंजीवी कहलाओगे ।''

सात चिरंजीवियों की सूची में अब आठवाँ मार्कण्डेयजी का नाम भी जुड़ गया ।

अश्वत्थामा बलिर्व्यासो हनूमांश्च विभीषणः ।
कृपः परशुरामश्च सप्तैते चिरजीविनः ।।
सप्तैतान् संस्मरेन्नित्यं मार्कण्डेयमथाष्टमम् ।
जीवेद् वर्षशतं साग्रमपमृत्युविवर्जितः ।।

दीर्घायुप्राप्ति के लिए इस 'प्रातःस्मरणीय पुण्यश्लोक' या 'शिष्टांजलि' के रूप में आज भी इन अष्ट चिरंजीवियों का प्रातःकाल में स्मरण किया जाता है ।

प्रणाम की ऐसी महिमा है कि कोई व्यक्ति भगवान को शठता से भी प्रणाम कर लेता है तो उसका कल्याण हो जाता है :

शाठ्येनापि नमस्कारः क्रियते चक्रपाणये ।
बद्धः परिकरस्तेन मोक्षाय गमनं प्रति ।। □

घर के सभी सदस्यों से प्रार्थना

नम्रता से सब प्राप्त हो जाता है, इसलिए प्रतिदिन माता-पिता, बड़े-बुजुर्ग, आचार्य, सद्गुरु - सबको प्रणाम करें । जो बड़े हैं, पूजनीय हैं, आदरणीय हैं उन्हें प्रणाम करें । भाई-बहनें यह नियम अपने-अपने घर में बना ही लें । आप बड़े जब प्रणाम करेंगे तो छोटे स्वाभाविक ही आपको प्रणाम करेंगे और घर में आपस में लड़ाई भी नहीं होगी । परिवार में, समाज में रहना है तो प्रेम रखना आवश्यक है और प्रेम रहता है प्रणाम-विनय से ।

देवरानी रोज जेठानी के चरणों में प्रणाम करे तो कभी लड़ जाय तो गंदी गाली दे सकती है क्या ? रोज देवर भाभीजी के चरणों में पड़ता है तो क्या वह कड़वे वचन कह सकती है ? प्रणाम करने का नियम बना लें तो लड़ाई नहीं हो सकती और हो जाय तो टिक नहीं सकती । कभी हो भी जाय तो जिनसे लड़ाई हुई, शाम को उनको प्रणाम करो तो मिट जायेगी । रात्रि में खटपट हो तो सुबह प्रणाम करो, मिट जायेगी । लड़ाई रखोगे तो प्रणाम नहीं होगा और प्रणाम करोगे तो लड़ाई नहीं रहेगी, यह नियम है । कितना सुंदर नियम !

आदर करो, प्रणाम करो, प्रेम करो । बड़े छोटों को प्यार करें, छोटे बड़ों को प्रणाम करें व उनकी आज्ञा मानें, सदाचरण सीखें और कहीं कोई बात बतानी हो तो वह नम्रता से ही कह दें । यह नियम सुखमय पारिवारिक जीवन की नींव है ।

सर्वश्रेष्ठ व्रत

(गतांक का शेष)

(पूज्य बापूजी के सत्संग-प्रवचन से)

अकामात् च व्रतं सर्वं... सब व्रतों में श्रेष्ठ व्रत यह है कि निष्काम हो जायें, कामनारहित हो जायें ।

तेरे फूलों से भी प्यार, तेरे काँटों से भी प्यार ।
चाहे सुख दे या दुःख चाहे खुशी दे या गम,
मालिक जैसे भी रखेंगे वैसे रह लेंगे हम ।।

यह भाव आते ही आपका सारा बोझ, सारे तनाव चले जायेंगे । लड़के या लड़की के विवाह की आप कामना करते हैं तो विवाह होता है, नहीं करें तो नहीं होता है – ऐसी बात नहीं है । जिस समय जिसका विवाह, जो मेल-जोल होना है वह होता है, कामना करके हम उसमें अड़चन डालते हैं । 'प्लाट बिक जाय... प्लाट बिक जाय...' करके चिंता करते हैं तो प्लाट बिकने में देर हो जायेगी । प्लाट बिक जाय – यह इच्छा तो आपकी है, अब इस इच्छा को छोड़ दो । इच्छा को छोड़ते ही इच्छा पूरी होने लगेगी लेकिन शर्त यह है कि इच्छा पूरी करने के लिए इच्छा नहीं छोड़ना । 'इच्छा पूरी हो जाय, इसलिए चलो इच्छा छोड़ देता हूँ ।' तो यह छोड़ना नहीं हुआ । सचमुच इच्छा छूटते ही इच्छित घटना घट जाती है क्योंकि इच्छा छूटते ही आपका हृदय शुद्ध हो जाता है और शुद्ध हृदय में सत्यसंकल्प-सामर्थ्य होता है ।

हम लोगों में और महापुरुषों में यह फर्क है कि हम अपनी कामना पूरी कराने के लिए या आशीर्वाद लेने के लिए महापुरुषों के पास गिड़गिड़ाते हैं । हजारों लोग उनके पास आते हैं और संतुष्ट हो जाते हैं । हम तो अपना एक कुटुम्ब लेकर बैठे हैं तब भी इतने परेशान होते हैं और महापुरुष इतने कुटुम्बों के साथ संबंधित हैं, इतने कुटुम्ब उनसे आशीर्वाद-प्रेरणा लेते हैं फिर भी मौज में रहते हैं । क्यों ? क्योंकि उनको अपनी व्यक्तिगत कामना नहीं है, व्यक्तिगत स्वार्थ, व्यक्तिगत सुखभोग की इच्छा नहीं है । वे व्यक्तित्व को, अपनी देह को पाँच भूतों का समझते हैं । मैं आपको महापुरुष बनने की कुंजियाँ बता रहा हूँ, कामना पूरी करने की कुंजियाँ बता रहा हूँ ।

भगवान अर्जुन से कहते हैं :

काम एष क्रोध एष रजोगुणसमुद्भवः ।
महाशनो महापाप्मा विद्ध्येनमिह वैरिणम् ।।

'रजोगुण से उत्पन्न हुआ यह काम ही क्रोध है, यह बहुत खानेवाला अर्थात् भोगों से कभी न अघानेवाला और बड़ा पापी है, इसको ही तू इस विषय में वैरी जान ।' (गीता : ३.३७)

महाशनो... काम बहुत खानेवाला है अर्थात् कामनाएँ पूरी नहीं होतीं । कितनी भी कामनाएँ पूरी हो जायें, फिर और कामनाएँ आ जायेंगी । वे जीवन खा जायेंगी लेकिन खुद रह जायेंगी । अब कामनाओं का अंत नहीं आता तो छोड़ो उनको ।

कामनाएँ पैदा हुईं – जैसे कि अच्छा बँगला, अच्छा मकान, अच्छा भोग मिले ; ये पूरी होती हैं और इन्हें भोगते हैं तो ये गहरी होती जाती हैं । ऐसा भोक्ता अपने-आपकी हिंसा करता है, अपने आत्मस्वभाव का घात करता है एवं वस्तुओं के अधीन होता जाता है । दूसरी बात कि जिनके पास ये वस्तुएँ नहीं हैं उनके चित्त में भी वह क्षोभ पैदा करता है । उनकी मानसिक हिंसा का पाप उसे लगता है ।

कुछ होती हैं आवश्यकताएँ और कुछ होती हैं इच्छाएँ । हमारी क्या आवश्यकता है यह परमात्मा जानते हैं । उनको भलीभाँति खबर है । हमें जन्म के बाद दूध की आवश्यकता है तो व्यवस्थित दूध मिल जाता है – न ज्यादा गरम न ज्यादा ठंडा, न ज्यादा मीठा न ज्यादा फीका । हमें आवश्यकता है

श्वास लेने की तो उसकी भी व्यवस्था है । हमें आवश्यकता है पानी पीने की तो मिल जाता है । हमें आवश्यकता है जमीन पर चलने की तो मिल जाती है । सूरज की किरणों की हमें बहुत ज्यादा आवश्यकता है । सूरज की किरणें गरीब-अमीर सभीको मिल जाती हैं । हमें कभी ठंड की, कभी गर्मी की आवश्यकता है तो वह मिल जाती है । हमें आवश्यकता है भोजन की तो थोड़े आयास से पेट भर जाता है । किंतु भोजन में चार सब्जियाँ हों - यह है इच्छा । आवश्यकता है अंगों को ढकने की, फिर जैसी सुविधा हो वैसा कपड़ा पहन लिया । अब दूसरे के चमकीले-धमकीले, टेरीकॉट, अमुक-अमुक कपड़े देखके अपने पास सुविधा नहीं है फिर भी पहनने की कामना की तो यह हुई इच्छा ।

आवश्यकता तो आसानी से पूरी हो सकती है पर इच्छाओं का कोई अंत नहीं है । ऐसा कौन माई का लाल है जिसकी सब इच्छाएँ पूरी हो गयी हों ? इच्छा हमेशा अपने से भौतिक पदार्थों में जो बड़े हैं उनको देखती है, अपने से छोटे की तरफ नहीं देखती । अपने से बड़े को देखते जाओगे तो इसका अंत नहीं है और बड़ों की गहराई में देखो तो बेचारों को दिन में आराम नहीं व रात को ठीक से नींद नहीं है । जो भौतिक दृष्टि से बड़े दिखते हैं, सुखी दिखते हैं वे बेचारे सुखी नहीं हैं और अगर वे स्वयं को सुखी मानते हैं तो गलती करते हैं परंतु जो लोग उनको सुखी मानकर अपनी शांति खो देते हैं वे दुगनी गलती करते हैं ।

आत्मारामी महापुरुष वस्तुओं से अपने बड़प्पन का प्रभाव नहीं दिखाते । वे तन का, मन का, वस्तुओं का उपयोग करके औरों को सुख देते हैं । इसलिए महापुरुषों का धन, वैभव या तेज दूसरों के तेज को दबानेवाला नहीं होता, दूसरों के अहंकार एवं वासनाओं को विकसित करनेवाला नहीं होता अपितु उनके परमात्म-प्रेम को, आत्मिक शांति को विकसित करनेवाला और अहंकार को विसर्जित करनेवाला होता है । ❑

आध्यात्मिक मार्ग पर कैसे चलें ?

एक जिज्ञासु ने पूज्य लीलाशाहजी महाराज से पूछा : ''ईश्वर की तरफ जाने की इच्छा तो बहुत होती है परंतु मन साथ नहीं देता । क्या करूँ ?''

संतश्री ने कहा : ''मुक्ति की इच्छा कर लो ।''

जिज्ञासु : ''परंतु इच्छा-वासनाएँ मिटती नहीं हैं ।''

संतश्री ने जवाब दिया : ''इच्छा-वासनाएँ नहीं मिटती हैं तो उसकी चिंता मत करो । उनके बदले ईश्वरप्राप्ति की इच्छा करो । रोज जोर-जोर-से बोलकर दृढ़ संकल्प करो कि 'मुझे इसी जन्म में राजा जनक की तरह आत्मा का अनुभव करना है ।' जिस प्रकार देवव्रत (भीष्म पितामह) ने जोर-से बोलकर संकल्प किया था कि 'गंधर्व सुन लें, देवता सुन लें, यक्ष और किन्नर सुन लें, राक्षस सुन लें ! मैं शांतनुपुत्र देवव्रत प्रतिज्ञा करता हूँ कि मैं अखण्ड ब्रह्मचर्य-व्रत का पालन करूँगा... मैं विवाह नहीं करूँगा... नहीं करूँगा... नहीं करूँगा...'

इस प्रकार तुम एकांत कक्ष में बैठकर अपने शुभ संकल्प को जोर-से दोहराओ : 'मैं इसी जन्म में आत्मा में स्थिति प्राप्त करूँगा... मैं इसी जन्म में राग-द्वेष से मुक्त हो जाऊँगा । मैं अमुक गुरु का शिष्य हूँ... जैसा बाप वैसा बेटा... मैं भी इसी जन्म में आत्म-साक्षात्कार करूँगा...' इस प्रकार शुभ संकल्पों को बारम्बार दोहराओ ।

जिंदगी में दूसरा कोई आग्रह न रखो । नव ग्रहों से भी आग्रह ज्यादा खतरनाक है । शरीर की तंदुरुस्ती और मन की पवित्रता का ख्याल रखकर जो भी सादा या स्वादिष्ट मिल जाय उसे खा-पी लिया... जो मिले वह ओढ़ लिया... परंतु 'ऐसा ही होना चाहिए... वैसा ही बनना चाहिए...' ऐसा आग्रह मत रखो । इच्छा पूरी न होने पर ऐसा आग्रह हृदय में कलह और अशांति पैदा करता है । साथ-ही-साथ मन-बुद्धि में आसक्ति, अहंकार, राग और द्वेष भी भर देता है । यह आग्रह ही तो चौरासी लाख जन्मों में धकेल देता है । अतः कोई भी आग्रह मत रखो । छोटे-बड़े सभी आग्रहों को निकालने के लिए केवल एक ही आग्रह रखो कि 'कुछ भी हो जाय, इसी जन्म में भगवान के आनंद को, भगवान के ज्ञान को और भगवत्शांति को प्राप्त करके मुक्तात्मा होकर रहूँगा ।' इस प्रकार मन को दुराग्रह से छुड़ाकर केवल परमात्मप्राप्ति का ही आग्रह रखोगे तो मार्ग सरल हो जायेगा । 'मैं आत्मा हूँ...' ऐसी भावना हमेशा करो । जिस प्रकार कोई करोड़पति 'मैं कंगाल हूँ... मैं कंगाल हूँ...' ऐसी दृढ़ भावना करेगा तो अपनेको कंगाल ही मानेगा, परंतु 'मैं करोड़पति हूँ' ऐसा भाव करेगा तो अपनेको करोड़पति मानेगा । इसी प्रकार 'मैं आत्मा हूँ' ऐसी भावना करो । रोज सुबह एकांत कक्ष में 'मैं ब्रह्म हूँ... अमर हूँ... चैतन्य हूँ... मुक्त हूँ... सत्यस्वरूप हूँ...' ऐसा शुभ संकल्प करो, परंतु 'मैं मारवाड़ी हूँ... सिंधी हूँ... गुजराती हूँ... पंजाबी हूँ... सुखी हूँ... दुःखी हूँ...' ऐसी झूठी भावना मत करना । ऐसी झूठी भावना करने से सुखी होने के बदले दुःखी और अशांत ही होओगे । ऐसे मिथ्या संस्कार तुम्हें जन्म-मरण के चक्र में डाल देंगे । तुम इस जन्म में सुख और शांति पाने के उपाय ढूँढ़ो और सोचो कि अब क्या करना चाहिए ? ऐसा नहीं कि तुम किसी साधु-संत के पास जाकर कहो कि 'साँईं ! मेरी पत्नी का स्वभाव बदल डालो ।'

अरे भाई ! तू अपना ही स्वभाव बदल दे, अपनी समझ सुधार ले । पत्नी का स्वभाव बदलेगा तो फिर कहोगे कि 'बेटे का स्वभाव बदलो... विरोधी का स्वभाव बदलो...' तू अपना ही स्वभाव क्यों नहीं बदलता ? उन लोगों में से अपना राग-द्वेष क्यों नहीं खींच लेता ? उलटा फँस मरने की माँग करता है !

'ऐसा हो जाय तो अच्छा... वैसा मिल जाय तो अच्छा...' इसकी अपेक्षा तो तू जहाँ है वहीं से मुक्त स्वभाव की ओर चल । अपनी बेवकूफी तो छोड़नी नहीं है और दुःख मिटाना चाहते हो ? अपनी बेवकूफी क्या है ? अपनी कल्पना के अनुसार संसार को, पत्नी को, पति को, बेटे को, मित्र को, नौकर को बदलकर सुखी होने की जो माँग है वही बेवकूफी है । वास्तव में ऐसा करने से कोई भी सुखी नहीं हुआ है । सुखी तो तभी हुआ जा सकता है जब अपने ब्रह्मत्व की, अपने सत्यस्वरूप की स्मृति दृढ़ कर लो । इस प्रकार मन में शुभ एवं सत्य संकल्पों को रोज-रोज दोहराने से, अपनी इच्छा-वासनारूपी दुराग्रहों को छोड़ने से और आत्मस्वरूप का स्मरण करने से तुम्हारा आध्यात्मिक पथ सरल हो जायेगा ।'' ❑

(पृष्ठ १५ 'मोक्ष की कुंजी' का शेष)

वे मनुष्य धनभागी हैं जो आत्मारामी संत-महापुरुषों के सान्निध्य में जाकर सत्संग-श्रवण करके इस प्रकार की जीवनोपयोगी कुंजियाँ पा लेते हैं और उनका अभ्यास करके अपने जीवन को रसमय बना लेते हैं । इससे उनके जीवन में लौकिक उन्नति तो होती ही है, साथ-साथ आध्यात्मिक उन्नति भी होती है । वे देर-सवेर अपने साक्षीस्वरूप परब्रह्म-परमात्मा का साक्षात्कार कर लेते हैं, अपने 'सोऽहम्' स्वभाव में जग जाते हैं । ❑

शोषण नहीं पोषण करें

– पूज्य बापूजी

प्राचीनकाल में हिम्मतनगर (गुजरात) से आगे रतनपुर नगर में रामराय नाम का एक धनवान सेठ रहता था । एक दिन उसने सोचा, 'मेरे पास इतनी धन-सम्पत्ति है, राजासाहब यह सम्पत्ति देखें तो उनको भी पता चले कि मैं कोई साधारण आदमी नहीं हूँ ।'

सेठ ने अपनी पत्नी तथा चारों बेटों और बहुओं से सलाह की । सब लोग तो राजी थे लेकिन छोटी बहू सत्संगी थी, उसने कहा : ''जो भी बाहर की चीजों से विशेष सुख लेने की चेष्टा है, वही दुःख का रूप धरकर आ जाती है ।''

सभीने उसकी बात को सुना-अनसुना कर दिया। सेठ ने खूब अनुनय-विनय करके राजा को भोजन के लिए आमंत्रित किया । राजा को प्रभावित कर सुख पाने की वासना से प्रेरित होके सेठ ने उन्हें तरह-तरह की बानगियाँ परोसकर भोजन कराया । राजा बड़े संतुष्ट हुए परंतु संतुष्ट करानेवाले का अहं भी तो संतुष्ट होना चाहिए । फिर रामराय राजा को नीचे गुप्त भंडार में ले गया । द्वार खोला तो बहुत सारे जगमगाते रत्न, हीरे, जवाहरात, मणियों के ढेर, सुंदर रत्नजड़ित बर्तन आदि देखकर राजा दंग रह गये : ''अरे... इतने रत्न ! क्या बात है ! सेठजी ! तुम वास्तव में नगरसेठ हो ।''

सेठ को संतोष हुआ । उसने और भी कमरों में राजा को ले जाकर बाप-दादों के बहुत-से कीमती स्वर्ण आभूषण दिखाये । राजा दंग रह गये कि 'मैं राजा काहे का, राजवैभव तो इसके पास है !' राजा ऊपर से वाह-वाह करते जा रहे थे और यह सब मुझे कैसे मिले इसका भी चिंतन कर रहे थे । राजा ने महल में आकर मंत्री को सारी बात बतायी और अपना इरादा भी बताया ।

मंत्री ने कहा : ''महाराज ! एक युक्ति है, आप रामराय सेठ को बुलाइये और उनसे कहियेगा कि जिसके पास धन हो पर बुद्धि न हो, वह धन रखने के काबिल नहीं है । आप ऐसे दो प्रश्न पूछना जिनका वे जवाब न दे सकें और 'जवाब न दे सकने पर उनकी सम्पत्ति राज्य की हो जायेगी' – ऐसा आदेश आप पहले से ही दे देना ।'' राजा को मंत्री का विचार पसंद आया ।

दूसरे दिन ही सेठ को बुलाकर राजा बोले : ''रामराय ! तुम्हारे पास वैभव तो खूब है, इतना वैभव तो बुद्धिमानों के पास होना चाहिए । जिनके पास बुद्धि नहीं वे वैभव सँभाल नहीं सकते । ऐसे में उनके वैभव को सँभालने का फर्ज राज्य का है । मैं तुमसे दो प्रश्न पूछूँगा, यदि तुमने उनका ठीक उत्तर नहीं दिया तो तुम्हारा इतनी सम्पत्ति रखना राज्य के नियमों के विरुद्ध होगा। प्रश्न हैं- सतत क्या बढ़ता रहता है और क्या घटता रहता है ?''

राजा ने तो कह दिया क्योंकि उनकी नीयत ठीक नहीं थी, उन्हें तो धन हड़पना था ।

प्रश्न सुनते ही रामराय थर-थर काँपने लगा, उसे चक्कर आने लगे । एक दिन की मोहलत माँगकर किसी तरह घर आया । सारी बात घरवालों को बतायी। सुनते ही पूरे घर में मातम छा गया । अब सबको छोटी बहू की याद आयी कि वह ठीक ही कहती थी । सासु ने रोते हुए आखिर छोटी बहू से कहा : ''बेटी ! अब क्या किया जाय तू ही बता । जैसा तू बोलेगी वैसा ही हम करेंगे ।''

छोटी बहू क्षण भर के लिए शांत हुई, फिर

बोली : ''आप चिंता न कीजिये, मैं उत्तर दे दूँगी ।''

बहू के आश्वासन भरे वचनों में सहानुभूति के साथ सच्चाई थी । सबको आश्वासन मिला ।

दूसरे दिन बहू ने कहा : ''पिताजी ! आप राजदरबार में जाइये और राजासाहब को बोलिये कि इन प्रश्नों के उत्तर तो मेरी सबसे छोटी बहू ही दे देगी ।''

रामराय राजदरबार में पहुँचा और कहा : ''राजन् ! आपके प्रश्न बहुत छोटे हैं । उनके उत्तर तो मेरी सबसे छोटी बहू ही दे देगी । अभी आती ही होगी ।''

इतने में तो वह आ गयी । उसके एक हाथ में घास का पूला था और दूसरे हाथ में दूध का प्याला था । उसने दूध का प्याला रख दिया राजा के सामने और घास का पूला रख दिया वजीर के सामने ।

राजा ने क्षुब्ध होते हुए पूछा : ''यह क्या करती है ?''

बहू ने कहा : ''राजन् ! आपकी बुद्धि बच्चों जैसी है, इसलिए आपको दूध की जरूरत है और जिसने आपको यह सलाह दी है उस वजीर की बुद्धि है बैल जैसी, इसलिए उसको घास खानी चाहिए ।''

राजा बड़े क्रुद्ध हो गये लेकिन बहू का आचरण वेदांती था, उसने कहा : ''राजासाहब ! हम आपकी प्रजा हैं । ये सेठजी हैं और मैं इनकी पुत्रवधू हूँ, बेटी जैसी हूँ तो आपकी भी बेटी हूँ । बेटी पर कोप करना आपको शोभा नहीं देता ।''

राजा बोले : ''तू मुझे बच्चा कहती है ?''

''जो दूसरों की सीख पर चले और अपनी प्रजा का शोषण करने को तत्पर हो जाय, उसे बच्चा नहीं कहें तो क्या कहें पिताजी ! और आप ही बताइये, जो परिणाम का विचार किये बिना ऐसी सलाह दे, राजासाहब का यश, कीर्ति, नाम कलंकित करनेवाले कार्य कराये, वह वजीर बैल जैसा नहीं है क्या ?

आप तो इतिहास के जानकार हैं । जिन राजाओं ने प्रजा का शोषण करके धनवान होने का गौरव लिया, वे राजा असुरों में गिने गये और जो राजा प्रजा के दुःख में दुःखी हुए वे पूजे गये, देवत्व को प्राप्त हुए । राजन् ! आप तो यह जानते ही हैं ।'' उसकी बात सुनकर सभीने साधुवाद दिया ।

बहू बोली : ''राजन् ! आपके दो ही प्रश्न थे-सतत क्या बढ़ता रहता है और क्या घटता रहता है ?'' तो इन प्रश्नों के उत्तर हैं कि ''तृष्णा-वासना एक ऐसी चीज है जो सदा बढ़ती रहती है और आयु सदा घटती रहती है ।''

रामराय ने कहा : ''राजन् ! मेरी बच्ची ने ही दोनों प्रश्नों के उत्तर दे दिये, अब आपकी क्या आज्ञा है ?''

राजा बोले : ''आप तो हमारे पुराने मित्र हैं । प्रजा का धन राजा का ही है । मेरी मति जरा ऐसी हो गयी थी, आप क्षमा करना । इस वजीर को मेरे राज्य में रहने की कोई जरूरत नहीं है, इसको मैं अपने राज्य से बाहर निकालता हूँ ।''

जो तृष्णा-वासना के चक्कर में बाहर की चीजों में सुख खोजते-खोजते जीवन पूरा कर देता है, उसने कोई दुर्लभ चीज नहीं पायी लेकिन जिसने साधुपुरुषों का संग, सत्संगति और ब्रह्मविचार किया, उसीने असली दुर्लभ चीज पायी, उसीने प्रतिक्षण घटती आयु का पूरा लाभ लिया । □

बुद्धिवर्धक धूप

पलाश और बिल्व के पत्तों को छाया में सुखा लें । सूखे पत्तों और मिश्री को समान मात्रा में पीसकर उसमें देशी घी मिला लें । गोबर के कंडे को जलाकर उस पर इस मिश्रण को डालकर धूप करें । धूप के पवित्र, सुगंधित वातावरण में यदि विद्यार्थी सारस्वत्य मंत्रजप सहित प्राणायाम करे तो उसकी बुद्धिशक्ति चमत्कारिक ढंग से बढ़ती है ।

रंगवर्षा द्वारा बरसी गुरुकृपा

मेरा नाम ममता सिंह है। मेरे पति आई.एस.आर.ओ. (इंडियन स्पेस रिसर्च ऑर्गनाइजेशन) में वैज्ञानिक हैं। मेरा बच्चा गौरव साढ़े छः साल का है। उसके पित्ताशय (गाल ब्लैडर) में पथरी थी। मैंने एक-से-एक डॉक्टर को दिखाया पर सभीने बोला कि इसके पित्ताशय की थैली को ऑपरेशन करके निकालना पड़ेगा। मैं इस बात से बड़ी परेशान थी। अंत में 'भोपाल मेमोरियल अस्पताल' में एक डॉक्टर से मिली, जिन्होंने बोला कि 'तुरंत भर्ती करो, अभी ऑपरेशन करेंगे वरना और समस्या आ सकती है।'

मैंने दीक्षा नहीं ली थी परंतु एक-डेढ़ साल से बापूजी को मानती थी। अचानक मुझे भीतर से प्रेरणा हुई कि बापूजी के होली शिविर में सूरत जायें। मैं अपने बच्चे गौरव व पति के साथ होली शिविर में पहुँची और वहाँ हमने दीक्षा ली। बापूजी के हाथों से रंगवर्षा का लाभ भी मिला। उसके बाद जो घटना घटी उससे सिद्ध हुआ कि उस रंगवर्षा द्वारा गुरुकृपा ही हम पर बरस गयी थी।

हम लोग वापस भोपाल आये और सोनोग्राफी करवायी तो पित्ताशय में कुछ भी नहीं मिला, पथरी गायब हो गयी थी। मेरा बेटा बिल्कुल ठीक हो गया। मेरे पास शब्द नहीं हैं जो मैं अपनी प्रसन्नता को व्यक्त कर सकूँ। बस इतना कहना चाहती हूँ :

जो शरण गुरु की आया,
इहलोक सुखी परलोक सुखी।

- ममता सिंह
अयोध्या नगर, भोपाल (म.प्र.)।
मोबाइल नं. : ९४२५६७४३४९.

हृदय की पुकार सुनते हैं हमारे बापूजी

पूज्य बापूजी के श्रीचरणों में प्रणाम !

हमारी कंपनी ने एक महीने पूर्व दिल्ली शाखा के सभी ५० कर्मचारियों को २ अप्रैल २००९ से देहरादून ट्रान्सफर का नोटिस जारी कर दिया था। इसी बीच बुराड़ी, दिल्ली में ९ व १० अप्रैल को आयोजित बापूजी के सत्संग की घोषणा हो गयी। आपकी कृपा से मुझे उसमें सत्संगियों को सत्संग-स्थल का मार्गदर्शन करने की सेवा मिल गयी। मैंने मन-ही-मन बापूजी से प्रार्थना की और अधिकारियों का मन पलटा।

सभी कर्मचारियों को २ अप्रैल को देहरादून ड्यूटी पर जाना था पर १ अप्रैल को कंपनी के मुख्य अधिकारियों एवं मालिक ने सभी कर्मचारियों को बुलाकर अपने निर्णय को कुछ समय तक स्थगित कर दिया। सभी कर्मचारी अति हर्षित हैं। मुझे उनसे भी अधिक हर्ष है क्योंकि गुरुकृपा ने मुझे सत्संगियों की सेवा के अवसर से वंचित होने से बचा लिया। हम सबकी तरफ से आपको कोटि-कोटि प्रणाम !

- विजय साहनी,
क्यू यू १० सी, पीतमपुरा, दिल्ली-८८.
मो. : ९३१०६९५७०९, ९८६८६३७०६६. ❑

(पृष्ठ ३ से 'प्रखर विवेक' का शेष) मिलती है लेकिन हम फिर से दीये को बुझा देते हैं और अपना जीवन पूरा कर देते हैं। ठोकर मिलती है यह भी भगवान की दया समझो, कृपा समझो। भगवान तुम्हें अपना बनाना चाहते हैं, तुम्हारे कर्मों को काटना चाहते हैं। वे तुम्हें संत के द्वार पहुँचाते हैं यह भी उनकी कृपा ही है।

विवेक के दीये का हम आदर करें न, तो हम कहीं-के-कहीं पहुँच जायें। इसलिए विवेक को जाग्रत रखने के लिए सयाने साधक कभी-कभी श्मशान में जाते हैं अथवा मन-ही-मन अपनेको श्मशान में पहुँचा देते हैं। विवेक से वैराग्य होता है, वैराग्य आते ही षट्सम्पत्ति और मोक्ष की इच्छा का प्राकट्य होता है। ❑

ग्रीष्म ऋतुचर्या

(१९ अप्रैल से २० जून २००९)

इस ऋतु के आहार-विहार में ऐसी सावधानी अवश्य रखनी चाहिए, जिससे शरीर के सोम अंश (कफ) की कमी की पूर्ति होती रहे और वायु का भी अधिक संचय न होने पाये ।

आहार : खाने योग्य – मधुर, सुपाच्य, जलीय, ताजे, स्निग्ध व शीत गुणयुक्त पदार्थ जैसे – गेहूँ, चावल, सत्तू, दूध, घी; लौकी, पेठा, गिल्की, परवल, चौलाई, पालक, धनिया, पुदीना, ककड़ी, नींबू; अंगूर, खरबूजा, नारियल, अनार, केला, आम, फालसा आदि ।

न खाने योग्य – नमकीन, खट्टा, रूखा, तला, मिर्च-मसालेदार । दही, अमचूर, अचार, इमली, आलू, बैंगन, मटर, चना, टमाटर, गोभी, भिंडी, गरम मसाला, हरी या लाल मिर्च व अधिक अदरक । छाछ (जीरा, धनिया, सौंफ व मिश्री मिलायी हुई ताजी छाछ अल्प मात्रा में ले सकते हैं) ।

विहार : इस ऋतु में सूती वस्त्र धारण करने चाहिए । विज्ञान की दृष्टि से इस ऋतु में चन्द्रमा की किरणें विशेष गुणकारी सिद्ध हुई हैं । खस, जवासे की टट्टियाँ दरवाजे, खिड़कियों पर लगानी चाहिए, जिससे गर्म लू घर में प्रवेश न कर सके ।

इन दिनों स्नायुमण्डल बहुत कमजोर रहता है । अतः स्त्री-प्रसंग से बचने की चेष्टा करें, अन्यथा इससे शारीरिक और मानसिक दोनों प्रकार की निर्बलता बढ़ती है ।

ग्रीष्म ऋतु में सायंकाल से पूर्व पुनः स्नान करना चाहिए । इससे शांत, सुखप्रद, प्रगाढ़ नींद आती है ।

सेवनीय औषधियाँ :

ग्रीष्म ऋतु में शाम को १० से १५ ग्राम त्रिफला घृत दूध में डालकर सेवन करना पित्त प्रकृतिवालों के लिए हितकर है । इन दिनों द्राक्षावलेह का सेवन भी लाभप्रद है ।

* ग्रीष्म ऋतु में हरीतकी (हरड़) प्रयोग *

हरड़ का चूर्ण कपड़छन करके उसमें दुगना गुड़ (एक साल पुराना) मिलाकर एक-एक ग्राम की गोलियाँ बना लें । सुबह व दोपहर एक-एक गोली गुनगुने पानी से लें । इसे दस-पंद्रह दिन तक लेने से पेट का फूलना, वायु, वायु से मल का सूखकर कब्ज होना, सूखी खाँसी, लू लगना, हैजा, मौसमी बुखार, भूख न लगना आदि विकार शांत होते हैं । आवश्यक हो तो अधिक समय भी ले सकते हैं ।

इस ऋतु में त्रिफला चूर्ण में समभाग घी मिलाकर प्रतिदिन ६ से १० ग्राम सेवन करने पर कफप्रकोप, पित्तप्रकोप, प्रमेह और जीर्ण विषमज्वर का नाश होता है, नेत्रज्योति बढ़ती है तथा शरीर सुदृढ़ हो जाता है । इससे बल-बुद्धि की वृद्धि होती है, रोगोत्पत्ति नहीं होती तथा आयु भी बढ़ती है ।

पोषक, संतुलित आहार :

पोषक, संतुलित आहार वह है जो – १. शरीर के शक्तिक्षय का निवारण करे २. शरीर की वृद्धि करे ३. शरीर को उचित ताप प्रदान करे ४. बलकारक हो ५. जल्दी पचनेवाला हो ६. अनुत्तेजक हो ७. स्मृति, आयु, वर्ण, ओज, तत्त्व एवं शोभा को बढ़ानेवाला हो ।

*

सिर का सहज सुरक्षा-कवच : टोपी

धूप से सिर की रक्षा करना स्वास्थ्य के लिए अत्यंत आवश्यक है । धूप में नंगे सिर घूमने से सिर, आँख, नाक व कान के अनेक रोग होते हैं । सिर में गर्म हवा लगने एवं बारिश का पानी पड़ने से भी अनेक रोग होते हैं । धूप के दुष्प्रभाव

से ज्ञानतंतुओं को क्षति पहुँचती है, जिससे याददाश्त कम हो जाती है ।

पूर्वकाल में हमारे दादा-परदादा नियमितरूप से टोपी या पगड़ी पहनते थे और महिलाएँ हमेशा सिर ढककर रखती थीं । इस कारण उन्हें समय से पूर्व बाल सफेद होना, अत्यधिक बाल झड़ना (गंजापन), सर्दी होना, सिरदर्द होना तथा आँख, कान, नाक के बहुत-से रोग - इनका इतना सामना नहीं करना पड़ता था । यदि आप अपने शरीर के उपरोक्त महत्त्वपूर्ण अंगों की कार्यक्षमता लम्बे समय तक बनाये रखना चाहते हैं तो धूप से अपने सिर की रक्षा कीजिये । इसके लिए टोपी अत्यंत सुविधाजनक तथा उपयोगी है । आयुर्वेद कहता है :

उष्णीषं कान्तिकृत्केश्यं रजोवातकफापहम् ।
लघु यच्छस्यते तस्माद् गुरु पित्ताक्षिरोगकृत् ।।

'मस्तक पर उष्णीष (पगड़ी, साफा, टोपी आदि) धारण करना कांति की वृद्धि करनेवाला, केश के लिए हितकारी, धूलि को दूर करनेवाला अर्थात् धूलि से बालों को बचानेवाला और वात तथा कफ का नाशक होता है । परंतु ये सब उत्तम लाभ तभी होते हैं जब वह हलका हो । यदि उष्णीष बहुत भारी हो तो पित्त की वृद्धि और नेत्रसंबंधी रोग को उत्पन्न करनेवाला होता है।'

(भावप्रकाश पू.खं., दिनचर्यादि प्रकरण : ५.२३७)

सूर्य से निकलनेवाली अल्ट्रा वायलेट किरणें त्वचा एवं होठों के कैन्सर का महत्त्वपूर्ण कारण मानी जाती हैं । ये किरणें काँचबिन्दु जैसी आँखों की विकृतियों को भी जन्म देती हैं ।

वैज्ञानिकों के अनुसार ऐसी टोपियाँ जिनमें किनारों पर कम-से-कम ३ इंच की पट्टी चारों तरफ लगी हो, सिर, चेहरा, कानों तथा गले को सूर्य की अल्ट्रा वायलेट किरणों से बचाती हैं, जिससे स्किन कैन्सर से बचाव हो जाता है । घुमावदार टोपियाँ अधिक उपयुक्त होती हैं । चुनाव-प्रचार में बँटनेवाली सिंथेटिक टोपियाँ लाभकारक नहीं होतीं, टोपियाँ मोटे कपड़े की होनी चाहिए । ❑

वर्ष के साढ़े तीन मुहूर्त

प्रतिपद्वत्सरादिर्या तृतीयाक्षय्यसंज्ञिका ।
दशमी विजयाख्या च मुहूर्तास्त्रय ईरिताः ।।
प्रतिपत्कार्तिके शुक्ला स मुहूर्तोऽर्धसंज्ञकः ।
स्वयंसिद्धा इमे ज्ञेयाः सर्वकार्यप्रसाधकाः ।।

'वर्ष प्रतिपदा (चैत्र-शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा या गुडी पड़वा), अक्षय तृतीया (वैशाख शुक्ल तृतीया) व विजयादशमी (आश्विन शुक्ल दशमी या दशहरा) ये पूरे तीन मुहूर्त तथा कार्तिक शुक्ल प्रतिपदा (बलि प्रतिपदा) का आधा - इस प्रकार साढ़े तीन मुहूर्त स्वयंसिद्ध हैं (अर्थात् इन दिनों में कोई भी शुभ कर्म करने के लिए पंचांग-शुद्धि या शुभ मुहूर्त देखने की आवश्यकता नहीं रहती) । ये साढ़े तीन मुहूर्त सर्वकार्य सिद्ध करनेवाले हैं ।'

(बालबोधज्योतिषसारसमुच्चयः : ८.७९,८०)

व्रत, पर्व एवं त्यौहार

*** २१ मई : श्री प्रीतमदासजी महाराज पुण्यतिथि**
*** २४ मई : दर्श-भावुका अमावस्या, वटसावित्री व्रत (अमावस्यान्त पक्ष)**
*** २७ मई : गुरु अर्जुनदेव शहीदी दिवस, व्यतिपात महापातयोग (रात्रि ०३-२४ से २८ मई ०९-३५ तक)**
*** २८ मई : गुरुपुष्यामृत योग (८-५० से)**
*** ३ जून : निर्जला-भीम एकादशी**
*** ५ जून : वटसावित्री व्रतारंभ**
*** ७ जून : देवस्नान पूर्णिमा, संत कबीरजी जयंती, वटसावित्री व्रत समाप्त**

यदि अनुचित समय में गर्भ रहने से संतान की जन्मकुंडली में चाण्डाल योग हो व अन्य शुभ ग्रहों की स्थिति ठीक न हो तो गर्भपात न कराके आनेवाले बालक के कल्याण के लिए प्रार्थना, पूजा, 'रामायण', 'श्री विष्णुसहस्रनाम' आदि का पाठ, जप, अनुष्ठान करें ।

संस्था समाचार

२१ मार्च को एक ही दिन **बिलासपुर (छ.ग.)** व **उमरिया (म.प्र.)** के निवासियों को सत्संगामृत का पान कराते हुए शाम को पूज्य बापूजी **शहडोल (म.प्र.)** पहुँचे । बरसती हुई वर्षा के बीच भी पूज्यश्री के दीदार के लिए तपस्या कर रहे शहडोलवासी सत्संग-वर्षा में भी सराबोर हो गये । यहाँ के नवनिर्मित आश्रम में पूज्यश्री के प्रथम पदार्पण से कृतकृत्य हो गये शहडोल के भक्तजन !

पूज्यश्री ने सत्संग में स्वास्थ्य की कुंजी प्रदान करते हुए कहा : ''७५ प्रतिशत रोग भय, चिंता और राग-द्वेष से ही उत्पन्न होते हैं । २५ प्रतिशत रोग खान-पान, व्यसन और प्रारब्ध के प्रभाव से होते हैं । रोज ७-८ मिनट 'हरि ॐ' का गुंजन करके शांत हो जायें तो ७५ प्रतिशत रोग पैदा करनेवाली बेवकूफी से आप ऊपर आ जाओगे और प्रेम व प्रसन्नता का प्रसाद पाकर अपने आत्मस्वभाव की जागृति में आगे बढ़ोगे ।''

२३ मार्च को **बालाघाट (म.प्र.)** की जनता को पूज्यश्री के दर्शन-सत्संग का सुअवसर प्राप्त हुआ । यहाँ उपस्थित विशाल जनसमूह को सुखी जीवन का पथप्रदर्शन करते हुए पूज्य बापूजी ने कहा : ''ज्ञान के प्रकाश में जीयो । दुःख बनाना मूर्खता है, सुख का लालच करना गुलामी है । सुखस्वरूप अपने आत्मस्वभाव को जानकर राग-द्वेष और सुख-दुःख की चपेट से पार परमानंद पाना बुद्धिमानी है । रोज सुबह चिंतन करो कि मैं सुखस्वरूप हूँ, ज्ञानस्वरूप हूँ, शरीर के मरने के बाद भी रहनेवाला व्यापक अमर आत्मा हूँ । बाहर की चीजों की गुलामी के बिना ही मेरा आत्मसुख जगता है ।''

इस बार **चेटीचंड महोत्सव** दो जगहों पर मनाया गया - **इन्दौर** और **अमदावाद । २५ व २६ मार्च** को आयोजित **इन्दौर** के सत्संग-कार्यक्रम में पूज्यश्री ने ब्रह्मज्ञान के सत्संग की महिमा बताते हुए कहा : ''लौकिक जगत में अलौकिक सत्संग सुनने का अवसर मिलना, लौकिक समारोह में अलौकिक ज्ञान का प्रसाद मिलना बहुत ऊँची बात है ।''

इन्दौर-चेटीचंड आयोजन समिति ने इस पर्व को प्राप्त हुए मनोरंजन के रूप को बदलकर इसे संतों का सत्संग-प्रसाद लोगों तक पहुँचाने का माध्यम बनाते हुए लोकमांगल्य के पट खोल दिये ।

भारत के विभिन्न स्थानों में तथा मिशिगन, ओहायो, वॉशिंगटन, शिकागो, टैन्नेसी, न्यूजर्सी, बोस्टन, एटलान्टा, अलास्का आदि अमेरिका के अनेक स्थानों में, साथ ही जर्मनी, जापान, आस्ट्रेलिया, कत्तर, अबुधाबी, कुवैत, स्पेन, साउथ कोरिया, कैनेडा, दुबई, यूके, इटली आदि अन्य देशों के कुल १५०० स्थानों पर लोगों ने इंटरनेट के द्वारा इस सत्संग-कार्यक्रम के जीवंत प्रसारण का लाभ लिया । इसी प्रकार पूज्यश्री के सभी प्रमुख सत्संगों के जीवंत प्रसारण का लाभ देश-विदेश के भक्तों को मिल रहा है ।

२७ से २९ मार्च तक **अमदावाद आश्रम** में चेटीचंड महोत्सव हुआ । निर्वासनिक, निर्द्वन्द्व जीवन का मार्ग बताते हुए पूज्य बापूजी ने कहा : ''चिंतन कैसा होना चाहिए ? शास्त्र कैसा होना चाहिए ? ईश्वरप्राप्ति में सहायक । सम्पर्क कैसा होना चाहिए ? निर्वासनिक होने में सहायक । काम कैसा करना चाहिए ? करने की वासना कम हो जाय और जिससे किया जाता है उस परमात्मा में प्रीति और विश्रांति हो जाय ऐसा ।

संसारी आदमी मुख्य काम छोड़कर फालतू कामों में जिंदगी खत्म कर देता है और महान आत्मा लोग मुख्य काम पूरा करके फिर संसारी काम में लगते हैं । भगवत्प्रीति, आत्मविश्रांति, आत्मज्ञान पाना - ये मुख्य काम हैं, इनको महत्त्व देना चाहिए । 'यह करना है, यह सँभालना है...'- जो सँभाला है वह तो छूट जायेगा, पहले जो सँभालना चाहिए उसको सँभाल ले ।''

भगवद्भक्त सखूबाई की नगरी **कराड़ (महा.)** में **३१ मार्च** व **१ अप्रैल** को ज्ञान-भक्ति की सरिता बही । यहाँ के विशाल कृष्णा नदी-तट पर आयोजित इस सत्संग में बड़ी संख्या में लोगों की उपस्थिति देख ऐसा लग रहा था मानो, पूरी कराड़ नगरी कृष्णा-तट पर पूज्यश्री की अमृतवाणी सुनने उमड़

पड़ी हो । भक्तिमती सखूबाई के जीवन की रसमयी कथा सुनाते हुए पूज्यश्री ने अपनी-अपनी निष्ठा में दृढ़ रहने की महिमा बतायी । इसके उदाहरण-स्वरूप भक्तिमती शबरी का दृष्टांत देते हुए पूज्यश्री बोले : ''१६ साल की शबरी ८० साल की वृद्धा हो गयी । लोग पागल कहते लेकिन उसकी निष्ठा ने रामजी को खींच ही लिया । अपनी निष्ठा व दृढ़ विश्वास अपना दुःख मिटाने के लिए, सफलता-शांति पाने के लिए, स्वयं को परम पद में प्रतिष्ठित करने के लिए पर्याप्त है ।''

३ अप्रैल को **तलबीड़, जि. सातारा (महा.)** में बने विशाल राम-मंदिर में रामनवमी के पर्व पर पूज्यश्री के करकमलों से देवमूर्तियों में प्राणप्रतिष्ठा की गयी । रामनवमी के पर्व पर अपने प्यारे सद्गुरुदेव के दर्शन-सत्संग के लिए दूर-दूर के गाँवों से उमड़े श्रद्धालुओं को देखकर लग रहा था मानो, तलबीड़ में कुंभ का मेला लगा हो । उपस्थितों को संबोधित करते हुए बापूजी बोले : ''आप लोगों को मैं सचमुच इस तलबीड़ तीर्थ में आने पर खूब-खूब धन्यवाद देता हूँ । जहाँ मंदिर की मूर्ति में प्राणप्रतिष्ठा आत्मानुभवी संत-महापुरुष के द्वारा होती है, वहाँ मूर्ति मूर्ति नहीं रहती, साक्षात् देवस्वरूप हो जाती है और जहाँ साक्षात् देव हैं वहाँ से एक मील तक की चारों तरफ की भूमि में तीर्थत्व आ जाता है । तलबीड़ गाँव में तीर्थ है, तीर्थ में तलबीड़ गाँव है ।''

४ व ५ अप्रैल के २ दिन दक्षिण की काशी नाम से विख्यात शक्तिपीठ - **कोल्हापुर (महा.)** के सत्संगप्रेमियों के लिए सौभाग्यमय रहे । दो दिवसीय इस सत्संग-कार्यक्रम में दीक्षा प्राप्त करने का सुअवसर भी श्रद्धालुओं को प्राप्त हुआ ।

९ अप्रैल को सुबह **चण्डीगढ़** में तथा **९ व १० अप्रैल** को **दिल्ली** के **बुराड़ी** में पूनम-दर्शन व सत्संग-महोत्सव हुआ । सनातन भारतीय संस्कृति से विमुख होकर अपनी सुषुप्त योग्यताओं के विकास की प्रणाली से दूर हो रही जनता को सावधान करते हुए पूज्य बापूजी बोले : ''मनुष्य में यह विशेषता है कि वह नई-नई खोज करके सूक्ष्म, सूक्ष्मतर, सूक्ष्मतम साधनों के द्वारा अपनी आत्मशक्ति को, प्रतिभा को जगा सकता है । अपने कर्मों में निष्कामता लाकर हृदय में आत्मसंतोष पाने और अपने जीवन में प्रसन्नता लाकर आप आनंदित व औरों को आनंदित करके आनंददाता ईश्वर को पाने की योग्यता लिया हुआ मनुष्य छोटी-छोटी बातों में दुःखी, तनाव का शिकार होकर अपनेको और दूसरों को मुसीबत में डालता है । सचमुच, भारतीय संस्कृति की महिमा से च्युत हुए मनुष्य की यह हालत है ।''

१६ से १९ अप्रैल तक **शुकताल, जि. सहारनपुर (उ.प्र.)** में ध्यानयोग शिविर हुआ । बिना किसी प्रचार के हुए इस शिविर में भी बड़ी संख्या में साधक पहुँच ही गये और शुकताल के इतिहास में ऐसा अभूतपूर्व आयोजन सम्पन्न हुआ । इसी जगह पर आत्मनिष्ठ श्री शुकदेव मुनि ने जिज्ञासुहृदय राजा परीक्षित को भागवत-कथा सुनाकर ब्रह्मस्वरूप में प्रतिष्ठित किया था । ऐसी भूमि पर स्वाभाविक रूप से गुरुओं की महती कृपा का स्मरण करते हुए पूज्यश्री बोले : ''जो युक्ति से न जाना जाय, जहाँ इन्द्रियाँ जा न सकें, जहाँ मन की भी पहुँच नहीं और बुद्धि बेचारी, बेचारी रह जाती है, उस तत्त्व का ज्ञान कराना यह गुरु की कितनी करुणा-कृपा है ! **'आश्चर्यो श्रोता कुशलोऽस्य वक्ता'** इसे सुननेवाला भी आश्चर्यकारक है और सुनाकर स्थिति करानेवाला वक्ता भी कुशल है ।''

२० अप्रैल को **मुजफ्फरनगर (उ.प्र.)**, **२१ अप्रैल** को **सहारनपुर (उ.प्र.)** व **२३ अप्रैल** को **पौंटा साहिब (हि.प्र.)** में सत्संग का १-१ सत्र आयोजित किया गया । अल्पकाल में ही तय हुए इन सत्संग-कार्यक्रमों में प्रचार-प्रसार की तो संभावनाएँ ही नहीं थीं, फिर भी सत्संगप्रेमियों की भीड़ से हर जगह पंडाल खचाखच भरा हुआ था ।

देश के कोने-कोने में फैले श्रद्धालुओं की सत्संग-क्षुधा को दूर करने हेतु तपती धूप में भी कष्टों की परवाह न करते हुए जनमानस को सत्संगामृत की शीतलता से भरते, दुःख-कष्टों के ताप को हरते लोकसंतों को कोटि-कोटि प्रणाम ! ❑

अवतरण-दिवस अर्थात् सेवा-दिवस

विश्ववंदनीय परम पूज्य संत श्री आसारामजी बापू के शिष्यों द्वारा हर वर्ष की तरह इस वर्ष भी चैत्र वद षष्ठी (१५ अप्रैल २००९) को बापूजी के 'अवतरण-दिवस महोत्सव' को 'सेवा-दिवस' के रूप में मनाया गया । इस अवसर पर १ अप्रैल से विभिन्न सेवाकार्य जारी हैं ।

सभी संत श्री आसारामजी आश्रम एवं आश्रम की १२०० से भी अधिक श्री योग वेदांत सेवा समितियों द्वारा अपने-अपने गाँवों, शहरों, नगरों में आध्यात्मिक जागृति हेतु हरिनाम संकीर्तन यात्राएँ निकाली गयीं । साथ ही झुग्गी-झोपड़ियों में गरीब-गुरबों को, बेसहारा विधवाओं को, अनाथालयों में अनाथों को, आदिवासी क्षेत्रों में अभावग्रस्तों को और अस्पतालों में मरीजों को अन्न, फल, औषधि, कपड़े, बर्तन, चप्पल, साबुन इत्यादि दैनिक जीवन में उपयोगी चीजें तथा आर्थिक सहायता आदि प्रदान कर कई-कई प्रकारों से सेवा-सुवास महकायी गयी । अवतरण-दिवस से शुरू करके पूरी गर्मियों में कई समितियों द्वारा बस स्टैंड, रेलवे स्टेशन इत्यादि विभिन्न सार्वजनिक स्थलों पर निःशुल्क छाछ वितरण केन्द्र, जल प्याऊ, शीतल शरबत वितरण केन्द्र आदि भी चलाये जा रहे हैं । नंगे सिर धूप में काम करनेवाले मजदूरों, किसानों में टोपियों के वितरण का भी विशेष अभियान बापूजी की प्रेरणा से चलाया गया है । देश भर में कई जगहों पर टोपियों का वितरण किया जा चुका है व आगे भी जारी है ।

इस प्रकार 'सभीमें भगवान का वास है'- इस भाव से दीन-दुःखियों की, समाज की निःस्वार्थ सेवा करने से **'सर्वे भवन्तु सुखिनः...'**, **'सबका मंगल, सबका भला'** की भावना जीवन में दृढ़ हो जाती है ।

पूज्य बापूजी ने सत्संग में कहा : ''संतों-महापुरुषों का अवतरण-दिवस, जयंती अथवा भगवान का अवतरण-दिवस रामनवमी, कृष्ण-जन्माष्टमी आदि मनाते हैं तो इससे हमको, समाज को ही फायदा है, हमारी ही आध्यात्मिक तथा भौतिक उन्नति होती है ।

मैं अपने लिए जन्मदिवस नहीं मनाता लेकिन जन्मदिवस को माध्यम बनाकर आश्रम व समितियों के द्वारा हर वर्ष लाखों बच्चों में प्रेरणादायी सुवाक्यवाली कापियाँ बँटती हैं । १७,००० से भी अधिक चल रहे बाल संस्कार केन्द्रों में भोजन-प्रसाद वितरण, भजन-कीर्तन, अच्छे संस्कारों का सिंचन आदि किया जाता है । १२०० से अधिक चल रहीं समितियों में सेवाकार्य करके उत्सव मनाया जाता है ।

अवतरण-दिवस का यही संदेश है कि आप 'बहुजनहिताय, बहुजनसुखाय' कार्य करके स्वयं परमात्मा में विश्रांति पा लो । बाहर से सुख पाने की वासना मिटाओ और सुखस्वरूप में विश्रांति पाते जाओ ।

महापुरुषों की जयंतियों से समाज को उत्साह मिलता है, प्रेम मिलता है, सहानुभूति मिलती है, **'परस्परदेवो भव'** की भावना का विकास होता है और वस्तुओं का सामाजीकरण हो जाता है । जिनको भगवान ने धन-दौलत दी है वे उसे अच्छे काम में लगाते हैं और जिनकी आर्थिक स्थिति कमजोर है वे सेवा करके अपना काम बना लेते हैं और कुछ लोग उसका उपयोग करके ईश्वर के रास्ते चलते हैं । जन्मदिवस पर हमें आपकी कोई भी चीज-वस्तु, रुपया-पैसा या बधाई नहीं चाहिए । हम तो केवल आपका मंगल चाहते हैं, कल्याण चाहते हैं ।'' ❑

पूज्य बापूजी का सत्संग - हरिद्वार में

दिनांक : ८ से १० मई ।

स्थल : हर की पौड़ी पार्किंग के पास, पंतद्वीप, भीमगोड़ा ।

सम्पर्क : ९२१९८७९९५९, ९३१९०२४७०४.

पूज्य बापूजी के अवतरण-दिवस पर हर ओर बही सेवा की गंगा

कहीं विशाल भंडारा तो कहीं अन्न-वितरण, कहीं वस्त्र-वितरण तो कहीं शरबत-छाछ का वितरण। बाल संस्कार केन्द्रों के बच्चों में भोजन व भक्तिरस तो बड़ों में भोजन व सत्संग-रस तो गरीबों में अन्न, औषध व आश्वासन का वितरण। पूज्य बापूजी के देशभर के शिष्यों ने अपने-अपने क्षेत्रों के गरीब-पिछड़े इलाकों में घूम-घूमकर दीन-दुःखियों की जरूरतों को पूरा किया, दुःख हरा तथा सेवा, सत्संग व स्नेह भरा।

पुणे (महा.)

शुकताल, जि. सहारनपुर (उ.प्र.)

ब्रह्मपुर, जि. गंजाम (उड़ीसा)

निवाई गौशाला, जि. टोंक (राज.)

तिसगाँव, जि. अहमदनगर (महा.)
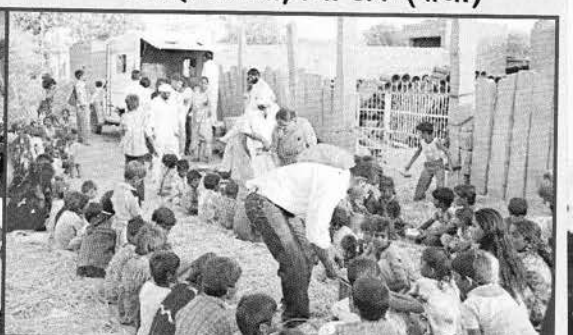
जोधपुर (राज.)

प्रेमराजपुर, जि. जौनपुर (उ.प्र.)
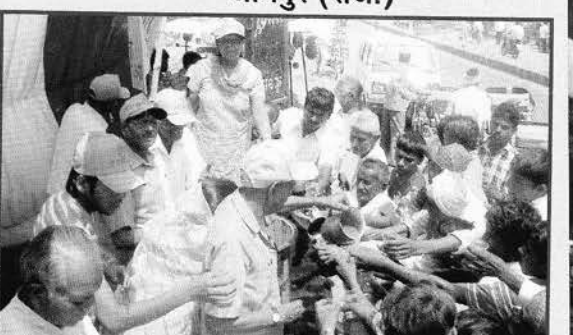
बुलन्दशहर (उ.प्र.)

1 May 2009
RNP. No. GAMC 1132/2009-11
WPP LIC No. CPMG/GJ/41/09-11
RNI No. 48873/91
DL (C)-01/1130/2009-11
WPP LIC No. U (C)-232/2009-11
MH/MR-NW-57/2009-11
MR/TECH/WPP-42/NW/09-11

इन्दौर (म.प्र.)

इस वर्ष पूज्य बापूजी के सान्निध्य में चेटीचंड महोत्सव इन्दौर व अमदावाद - दो स्थानों पर हुआ, फिर भी सत्संगियों ने पंडाल को नन्हा बना दिया।

श्रीराम मंदिर, तलबीड़, जि. सातारा (महा.) में पूज्य बापूजी के करकमलों से प्राणप्रतिष्ठा हुई। 'तलबीड़ में तीर्थ, तीर्थ में तलबीड़' - ऐसी व्याख्या गाँववालों ने कभी नहीं सुनी थी। मंदिर के इर्द-गिर्द साफ-सफाई, संस्कार व स्नेह बनाये रखने की, जीवन को उन्नत करने की सीख पाकर आह्लादित, आनंदित, धन्य हुए तलबीड़वासी !

बुराड़ी (दिल्ली) में आयोजित सत्संग-कार्यक्रम में उमड़ी विशाल जनमेदनी। यहाँ कादिर न्याजी, हैदर हसन और निजामी कव्वाल ने बापू की खिदमत में कव्वाली पेश की। इसकी वी.सी.डी. भी उपलब्ध है।

Posting at PSO Ahmedabad between 25th of preceding month to 10th of current month. * Posting at ND PSO on 5th & 6th of E.M. * Posting at MBI Patrika Channel on 9th & 10th of E.M.